

卐 श्रीमद्राघवो विजयते 卐  
धर्मचक्रवर्ती, महामहोपाध्याय, जीवनपर्यन्त कुलाधिपति, वाचस्पति, महाकवि  
श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य **स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज**  
का राष्ट्रीय, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना का संवाहक

# श्रीतुलसीपीठसौरभ

( मासिक पत्र )

सीतारामपदाम्बुजभक्तिं भारतभविष्यु जनतैक्यम्।  
वितरतु दिशिदिशि शान्तिं श्रीतुलसीपीठसौरभं भव्यम्॥

वर्ष १३ फरवरी २००९ (४, ५ मार्च को प्रेषित) अंक-६

**संस्थापक-संरक्षक**  
श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य  
**स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज**  
**संरक्षक एवं प्रकाशक**  
डॉ० कु० गीता देवी ( पूज्या बुआ जी )  
प्रबन्धन्यासी, श्रीतुलसीपीठ सेवान्यास, चित्रकूट  
**सम्पादक**  
आचार्य दिवाकर शर्मा  
220 के, रामनगर, गाजियाबाद-201001  
दूरभाष-0120-2712786, मो०- 09971527545  
**सहसम्पादक**  
डा० सुरेन्द्र शर्मा 'सुशील'  
डी-255, गोविन्दपुरम्, गाजियाबाद-201001  
दूरभाष : 0120-2767255, मो०-09868932755  
**प्रबन्ध सम्पादक**  
श्री ललिता प्रसाद बड़थवाल  
सी-295, लोहियानगर, गाजियाबाद-201001  
0120-2756891, मो०- 09810949921  
**सहयोगी मण्डल** (ये सभी पद अवैतनिक हैं)  
डा० श्रीमती वन्दना श्रीवास्तव, 09971149779  
श्री दिनेश कुमार गौतम, 09868977989  
श्री सत्येन्द्र शर्मा एडवोकेट, 09810719379  
श्री अरविन्द गर्ग सी.ए., 09810131338  
श्री सर्वेश कुमार गर्ग, 09810025852  
डॉ० देवकराम शर्मा, 09811032029

**पूज्यपाद जगद्गुरु जी के सम्पर्क सूत्र :**  
**श्रीतुलसीपीठ, आमोदवन,**  
पो० नया गाँव श्रीचित्रकूटधाम (सतना) म०प्र० 485331  
07670-265478, 05198- 224413  
**वसिष्ठायनम् - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य मार्ग**  
रानी गली नं०-1, भूपतवाला, हरिद्वार (उत्तरांचल)  
दूरभाष-01334-260323  
**श्री गीता ज्ञान मन्दिर**  
भक्तिनगर सर्कल, राजकोट (गुजरात)  
दूरभाष-0281-2364465  
**पंजीकृत सम्पादकीय कार्यालय एवं पत्र व्यवहार का पता**  
आचार्य दिवाकर शर्मा,  
220 के., रामनगर, गाजियाबाद-201001  
दूरभाष-0120-2712786, मो०- 09971527545

## रामानन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले विषयानुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
१.	सम्पादकीय	-	३
२.	वाल्मीकिरामायण सुधा (४६)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	५
३.	श्रीमद्भगवद्गीता (७७)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	९
४.	सकल अमानुष करम तुम्हारे	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	१२
५.	काका विदुर (कविता)	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	१५
६.	पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम	प्रस्तुति- पूज्या बुआ जी	१५
७.	सत्कर्म करिए, रोग भगाइए	श्री जगदीश प्रसाद गुप्त	१६
८.	शान्ति की ओर	श्री पुष्पेन्द्र कुमार मिश्र	१९
९.	गुरु मेरे उर बसैं	कपूर चन्द्र 'केतन'	२०
१०.	राघव प्रभु प्रगट भये	आचार्य दिवाकर शर्मा	२०
११.	श्रीराघव अवध प्रगटे आज	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	२१
१२.	विश्व शान्ति के प्रहरी	डा० रामदेव प्रसाद सिंह 'देव'	२१
१३.	निरंजन के दृग अंजन देख्यो	पूज्यपाद जगद्गुरु जी	२२
१४.	प्रस्तर शिला राम ने तारी	श्रीमती श्रीदेवी चौहान	२२
१५.	आमन्त्रण	-	२३
१६.	गायत्री मन्त्र की महत्ता का रहस्य	पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत	२४
१७.	पूज्यपाद जगद्गुरु जी द्वारा उद्घाटन	श्रीमती कुसुम गोयल	३०
१८.	व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक	-	३२

### सुधी पाठकों से विनम्र निवेदन

१. 'श्रीतुलसीपीठसौरभ' का प्रत्येक अंक प्रत्येक दशा और परिस्थिति में प्रत्येक महीने की ४ तथा ५ तारीख को डाक से प्रेषित किया जाता है। पत्रिका में छपे महीने का अंक आगामी महीने में ही आपको प्राप्त होगा।
२. 'श्रीतुलसीपीठ सौरभ' मंगाने हेतु बैंक ड्राफ्ट 'श्रीतुलसीपीठसौरभ' के नाम से ही बनवाएँ तथा प्रेषित लिफाफे के ऊपर हमारा नाम तथा पूरा पता स्पष्ट अक्षरों में लिखें। मनीआर्डर पर हमारा नाम-पता ही लिखें प्रधान सम्पादक अथवा प्रबन्ध सम्पादक कभी न लिखें।
३. पत्रव्यवहार करते समय अथवा ड्राफ्ट-मनीआर्डर भेजते समय अपनी वह ग्राहक संख्या अवश्य लिखें जो पत्रिका के लिफाफे के ऊपर आपके नाम से पहले लिखी है।
४. 'श्रीतुलसीपीठसौरभ' में 'पूज्यपाद जगद्गुरु जी' से अभिप्राय धर्मचक्रवर्ती श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज समझा जाए।
५. 'श्रीतुलसीपीठ सौरभ' में प्रकाशित लेख/कविता/अथवा अन्य सामग्री के लिए लेखक/कवि अथवा प्रेषक महानुभाव ही उत्तरदायी होंगे, सम्पादक मण्डल नहीं।
६. 'श्रीतुलसीपीठसौरभ' प्राप्त न होने पर हमें पत्र लिखें अथवा फोन करें। हम यद्यपि दूसरी बार पुनः भेजेंगे। किन्तु अपने डाकखाने से भलीप्रकार पूछताछ करके ही हमें सूचित करें।
७. डाक की घोर अव्यवस्था के चलते हमें दोषी न समझें। हमें और आपको इसी परिस्थिति में 'पूज्यपाद जगद्गुरु जी' का कृपा प्रसाद शिरोधार्य करना है।
८. सुधी पाठक अपने लेख/कविता आदि स्पष्ट अक्षरों में लिखकर भेजें। यथासमय-यथासम्भव हम प्रकाशित करेंगे। अप्रकाशित लेखों को लौटाने की हमारी व्यवस्था नहीं है।

#### सदस्यता सहयोग राशि

संरक्षक	११,०००/-
आजीवन	५,१००/-
पन्द्रह वर्षीय	१,०००/-
वार्षिक	१००/-

-सम्पादकमण्डल

श्रीतुलसीपीठ सेवान्यास, चित्रकूट के स्वामित्व में मुद्रक तथा प्रकाशक डॉ० कु० गीतादेवी (प्रबन्धन्यासी) ने श्री राघव प्रिंटर्स, जी-१७ तिरुपति प्लाजा, बेगम पुल रोड, बच्चापार्क, मेरठ, फोन (का०) 4002639, मो०-9319974969, से मुद्रित कराकर कार्यालय २२० के., रामनगर, गाजियाबाद से प्रकाशित किया।

## सम्पादकीय-

## राम जनम सुखमूल

भारतभूमि को ही यह सौभाग्य प्राप्त है कि जो परब्रह्म परमात्मा विमलात्मा, अमलात्मा, योगियों के ध्यान में नहीं आ पाते वे ही निर्गुण से सगुण, व्यापक से व्याप्य, निराकार से साकार और ब्रह्म से बालक बनकर कभी माँ कौसल्या और कभी देवकी-यशोदा के आँचल में प्रकट हो जाते हैं। वे ही परब्रह्म परमात्मा श्रीराम आज से करोड़ों वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ला नवमी को श्रीअयोध्या जी में महाराज दशरथ के आँगन में माता कौसल्या के गर्भ से प्रकट हुए। उनके अवतरण का हेतु श्रीगीता जी में-

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

साधुओं की रक्षा करना, दुष्टों का विनाश करना और धर्म की स्थापना करना कहा गया है। जिसे सन्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने श्रीमानस में इस प्रकार वर्णन किया है-

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥

करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं विप्र धेनु सुर धरनी॥

तब तब प्रभु धरि विविध शरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

अधर्म की वृद्धि होने पर दुष्ट, नीच और अभिमानी लोग जब बहुत अन्याय करने लगते हैं और ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी बहुत कष्ट पाते हैं तब प्रभु विविध शरीर धारण करके दुष्टों का विनाश कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।

श्रीमद्भागवत में तो भगवान श्रीराम के अवतरण का उद्देश्य इस प्रकार कहा गया है-

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्य शिक्षणं

रक्षो वधायैव न केवलं विभो।

कुतोऽन्यथा स्याद् रमतः स्व आत्मनः

सीताकृतानि व्यसनानीश्वरस्य॥

विभो! आपका मनुष्यावतार केवल राक्षसों के वध के लिए नहीं है, मुख्य उद्देश्य तो मनुष्यों को शिक्षा देना है। अन्यथा अपने स्वरूप में रमण करने वाले आप जगदीश्वर को श्रीसीता जी के वियोग में इतना दुःख कैसे हो सकता था।

यह निर्विवाद सत्य है कि भगवान श्रीराम का अवतरण सबको सुख देने के लिए ही हुआ। उनकी बाल लीलाएँ जहाँ अवध के बालकों को सदाचार और भारतीय संस्कृति की रक्षा करने हेतु प्रेरित करती हैं वहीं व्यावहारिक स्तर पर माता-पिता, गुरुजनों तथा बड़ों के प्रति सम्मानभाव सिखाती हैं। सन्तशिरोमणि गोस्वामी जी महाराज ने कहा भी है-

प्रातःकाल उठि कै रघुनाथा। मात पिता गुरु नावहिं माथा।।

अनुज सखा संग भोजन करहीं। मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं।।

जेहि विधि सुखी होहिं पुरलोगा। करहिं कृपानिधि सोइ संयोगा।

श्रीराम का चरित्र आरम्भ से ही लोकमर्यादा के अनुकूल है। बड़े होने पर जब महाराज दशरथ उन्हें युवराज बनाना चाहते हैं श्रीराम का यह कथन कितना लोकमर्यादा से पूर्ण है—

बिमल वंश यह अनुचित एकू।

बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू।।

इतना ही नहीं बनवास को जाते समय उनका धैर्य, लक्ष्मण-सीता जी को समझाना, बनवासियों को दर्शन देना, राक्षस विनाश आदि सभी अवसरों पर भगवान श्रीराम का स्वरूप मर्यादा से पूर्ण है। इसी कारण उन्हें मर्यादापुरुषोत्तम कहा गया है। हिन्दू संस्कृति की पूर्ण प्रतिष्ठा उनके चरित्र में अभिव्यक्त हुई है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक परिस्थिति में उनके जीवन से प्रेरणा लेकर मानव समाज का कल्याण कर सकता है। चाहे पुत्र के नाते, भाई के नाते, पति के नाते, स्वामी के नाते और राजा के नाते सभी सम्बन्धों का श्रीराम ने मर्यादापूर्वक निर्वाह किया और भारतीय समाज के समक्ष ऐसा आदर्श उपस्थित किया जो युगों युगों तक भारतीय ही नहीं विश्व के जनमानस को प्रेरणा देता रहेगा।

श्रीराम का आदर्श आज के सन्दर्भ में और भी अधिक प्रासंगिक है। आज भारत का युवक पश्चिम की चकाचौंध में दिग्भ्रमित होकर सारे सामाजिक मूल्यों को नष्ट करने पर तुला है। भाई भाई को, पुत्र पिता को, राजा प्रजा को उचित महत्त्व नहीं देता। शासक येन केन प्रकारेण कुर्सी सुरक्षित रखने में तथा ऐश्वर्य के साधन जुटाने में संलग्न हैं तो समाज का प्रत्येक वर्ग कदाचार एवं भ्रष्टाचार में लिप्त है। भगवान श्रीराम से प्रार्थना है कि वे पुनः अवतार लेकर भारतभूमि को पाप से बचाएँ और इस देश को पुनः प्राचीन सम्मान प्राप्त करायें। नमो राघवाय।

आचार्य दिवाकर शर्मा

प्रधान सम्पदक

## वाल्मीकिरामायण सुधा ( ४६ )

(गतांक से आगे)

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर  
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

रावण ने सीता जी का बलात् अपहरण करना  
चाहा तो सीता जी ने क्रुद्ध होकर कहा-

यदन्तरं सिंहसृगालयोर्वने  
यदन्तरं स्यन्दनिका समुद्रयोः।  
सौराग्र्य सौवीरकयोर्यदन्तरं  
तदन्तरं दाशरथेस्तवैव च॥

बन में रहने वाले सिंह और सियार में, समुद्र  
और छोटी नदी में तथा अमृत और काँजी में जो  
अन्तर है वही अन्तर श्रीराम और तुलसी में है। रामजी  
सिंह हैं तू सियार है, राम जी समुद्र हैं तू गन्दी नाली है,  
राम जी अमृत हैं तू खट्टी छाछ है। तब रावण-

अंकेनादाय वैदेहीं रथमारोपयत्तदा।

माया की सीता को (छाया को) पकड़कर ले  
चला। सीताजी सबके प्रति 'रक्षा करो, रक्षा करो' कह  
रही हैं। कोई भी रक्षा करने को तैयार नहीं है। जटायु  
ने सुना-

गीधराज सुनि आरत बानी।

रघुकुल तिलक नारि पहिचानी॥

और कहा- अरे रावण! खड़ा रह। सीता जी  
मेरी बहुरानी हैं, मैं चक्रवर्ती सम्राट् दशरथ का मित्र  
हूँ, मैं अयोध्या का हूँ। एक बात बताऊँ कि सीता  
हरण एक ऐसी घटना है कि पूरा का पूरा दक्षिणापथ  
राम जी के पक्ष में हो गया। वानर और भालुओं ने भी  
इस घटना की निन्दा की और सक्रिय भाग लिया।  
ऐसा क्यों हुआ? सत्य यह है कि सीता जी भारतीय  
संस्कृति हैं और रावण के द्वारा हरण का अर्थ  
है- भारतीय संस्कृति पर विदेशी संस्कृति का

वर्चस्व हो जाना। इसको कोई भी सहृदय भारतीय  
नहीं सह सका। पशु भी इस घटना के विरोध में  
संघर्ष करने के लिए इकट्ठे हो गये। यदि सीता जी  
राम जी की मात्र व्यक्तिगत पत्नी रहीं होतीं तो कदाचित्  
इतनी बड़ी सहायता उन्हें किसी से नहीं मिलती।  
भीष्म और जटायु दोनों का अन्तर देखिये। आचार्य  
भी जब अनुचित करेगा तो उसे दण्ड मिलना ही  
चाहिए। ऐसी कौन सी घटना घट गई कि भीष्म के  
प्रति भगवान इतने दुःखी हुए कि युधिष्ठिर से कहा  
कि चलकर पूछो कि आचार्य भीष्म जी आप कब  
मरेंगे? आपको तो शीघ्र मर जाना चाहिए। इसका  
अर्थ है कि भगवान श्रीकृष्ण को भीष्म का व्यवहार  
अच्छा नहीं लगा होगा। दोनों घटनाएँ एक जैसी हैं,  
एक ओर मैथिली का हरण हो रहा है और दूसरी एक  
नारी (द्रौपदी) का वस्त्रापहरण हो रहा है। यहाँ पति  
(श्रीराम) नहीं हैं वहाँ पति (पाण्डव) बैठे हैं अतः  
वहाँ की घटना और भी अधिक करुण है। भीष्म  
आदि के प्रति द्रौपदी चिल्ला रही है। किन्तु वे सिर  
नीचा करने बैठे हैं। अवस्था से कोई वृद्ध नहीं होता  
व्यवस्था से वृद्ध होता है। अन्याय को सहते रहना ही  
बुढ़ापा है और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करके  
यावज्जीवन कुचलते रहना ही युवावस्था है। भीष्म  
अन्याय देखते रहे। उधर जटायु ने आक्रमण किया,  
घनघोर युद्ध किया। रावण की दायीं ओर की दसों  
भुजाएँ उखाड़कर फेंक दीं। फिर गम्भीर युद्ध हुआ  
अन्त में रावण ने तलवार निकाली और जटायु के  
दोनों पंख, पैर और पार्श्वभाग काट डाले। तब-

स च्छिन्नपक्षः सहसा रक्षसा रौद्रकर्मणा।

निपपात महाग्रधो धरण्यामल्पजीवितः॥

रावण के द्वारा पंख काट देने पर महागृध्र जटायु पृथ्वी पर गिर पड़े। गोस्वामिपाद लिखते हैं-

काटेसि पंख परा खग धरनी।

सुमिरि राम करि अद्भुत करनी॥

जटायु ने अपने प्राणों की आहुति दे दी भीष्म नहीं दे पाये। भीष्म समर्थ थे। एक बार जोर से कह देते तो दुर्योधन इतना बड़ा कुकर्म करता क्या? शक्ति के रहने पर भी अन्याय का विरोध नहीं किया भीष्म ने, इतिहास भीष्म को क्षमा नहीं करेगा। भगवान ने भी उनको क्षमा नहीं किया। दोनों के अन्तर पर विचार कीजिए। लक्ष्मण जी के प्रति सीता जी कृतज्ञ हैं। वे लक्ष्मण को बार-बार पुकार रही हैं। कपट मृग के अवसर पर लक्ष्मण ने जब जाने को मना किया था तब सीता जी ने कहा था-

नैव चित्रं सपत्नेषु पापं लक्ष्मण यद्भवेत्।

त्वद्विधेषु नृशंसेषु नित्यं प्रच्छन्नचारिषु॥

जब लक्ष्मण ने कहा था माँ! मेरे चले जाने से अनर्थ होगा तब सीता जी ने कहा था होने दो। कोई आश्चर्य नहीं है राक्षस जैसे शत्रु जो छिपकर काम करते हैं उनके सम्बन्ध में यह पाप हो कोई आश्चर्य नहीं। वे घनघोर कार्य करेंगे, घृणित कर्म करेंगे पर उसका हमें उत्तर देना चाहिए। सीता जी ने थोड़ा कटु कहा था अतः पश्चात्ताप कर रही हैं। माया का नाटक है। इधर भगवान दोनों स्थानों पर हैं जटायु के पास भी और भीष्म के पास भी। शय्या पर हैं भीष्म बाणों की शय्या पर और जटायु भगवान श्रीराम की गोद की शय्या पर।

राघव गीध गोद करि लीन्हों।

नयन सरोज सनेह सलिलशुचि

मनहुँ अरघ जल दीन्हों। राघव गीध.....

भगवान भीष्म के यहाँ रथ से आ रहे हैं जटायु के यहाँ पैदल आ रहे हैं। भीष्म को स्पर्श नहीं कर रहे हैं और जटायु को स्पर्श कर रहे हैं जैसे पिता को बेटा स्पर्श करता है-

कर सरोज सिर पर सेउ कृपासिन्धु रघुवीर।

निरखि राम छवि धाम मुख बिगत भई सब पीर॥

भगवान भीष्म से पूजा ले रहे हैं और जटायु की पूजा कर रहे हैं। भीष्म पृथ्वी पर पड़े हैं और जटायु भगवान की गोद में पड़े हैं। भगवान राम जटायु की धूलि को अपनी जटाओं से झाड़ते हैं-

जटायु की धूर जटानि सों झारी।

भगवान श्रीराम आज जटायु को गोद में लिए हुए हैं और लक्ष्मण जी से कहते हैं सीताहरण का आज तुझे उतना दुःख नहीं है जितना हमारे लिए प्राणत्याग करने वाले जटायु की मृत्यु से हो रहा है।

राजा दशरथः श्रीमान् तथा मम महायशाः।

पूजनीयश्च मान्यश्च तथायं पतगेश्वरः॥

जिस प्रकार मेरे पिताजी राजा दशरथ मेरे लिए मान्य थे उसी प्रकार जटायु मेरे पूजनीय भी हैं मान्य भी हैं। अपने बाप को आज कोई श्राद्ध ही नहीं करता हैं भगवान जटायु का श्राद्ध करते हैं। जटायु मुस्कुराने लगे। राघव जी के पूछने पर जटायु ने कहा- मैं अपने भाग्य को देखकर मुस्कुरा रहा हूँ। क्या भाग्य है? जटायु ने कहा- ब्रह्मा जी से मेरे पिताजी ने मेरा नाम रखवाया तो ब्रह्मा जी ने कहा इनका नाम जटायु होगा। मैंने सोचा ऐसा नाम कैसे रख दिया। पर आज जब आप मेरी धूल को अपनी जटाओं से झाड़ रहे हैं तो मुझे जटायु शब्द का अर्थ समझ में आ गया। जटा+आयुः जटायु आयुः यस्य सः जटायुः। अर्थात् राम जी की जटाओं में जिसकी आयु छिपी हुई है वह है जटायु। इतिहास चकित हो गया; प्रभु आप कितने

प्यारे हैं। श्री भगवान राम से पूछा पिता जी! आपकी बहू सीताजी कहाँ गई? तब जटायु ने कहा-

**यामोषधीमिवायुष्मन्नन्वेषसि महावने।**

**सा देवी मम च प्राणा रावणेनोभयं हृतम्।।**

हे आयुष्मन्! आपकी आयु तो रहेगी पर मैं अब जा रहा हूँ। मेरी आयु भी आपको मिल जाय।

**राजन के राज महाराज महाराजन के उमर दराजे महाराज तेरी चाहिए।**

हे राघव! जिसको औषधि की भाँति आप खोज रहे हैं। उन बहूरानी सीता जी को और मेरे प्राणों को दोनों को रावण चुरा ले गया है। श्रीराम को विलाप करते हुए देखकर धर्मात्मा जटायु ने कहा-

**सा हता राक्षसेन्द्रेण रावणेन दुरात्मना।**

**मायामास्थाय विपुलां वातदुर्दिनसंकुलाम्।।**

हे रघुनन्दन! दुरात्मा रावण ने विपुल माया का आश्रय लेकर आँधी वर्षा की सृष्टि करके बहूरानी सीता का हरण किया था किसी को भी दिखाई नहीं पड़ा। मैंने देखा, लड़ाई की, मेरे पंख कटे मैं बहूरानी को बचा नहीं पाया। इसीलिए पृथ्वी पर मैं उलटा नहीं गिरा। क्योंकि पृथ्वी मेरी समधिनी है, मैं उनसे क्षमा माँग रहा हूँ कि आप मुझे क्षमा करें मैं आपकी बेटी की रक्षा न कर सका। राघव! कैसी विडम्बना है कि दशरथ जी और मैं दोनों ही आपका राज्याभिषेक न देख सके। दशरथ जी पुत्र के वियोग में प्राण दे गये और मैं आज पुत्रवधू के वियोग में प्राण त्याग रहा हूँ। राघव! दशरथ जी के तो और भी बेटे हैं। पर मैंने तुमको अकेले को दत्तक के रूप में लिया था मेरा श्राद्ध अवश्य करना। राघव ने कहा- तात! मैं आपका श्राद्ध अवश्य करूँगा। राघव १३ दिन यहाँ रुक जाना। तेरहवीं के श्राद्ध में तो ब्रह्म भोजन करना। ब्राह्मणों को फल खिला देना वार्षिक श्राद्ध के समय ही रावण

का वध करना। रावण की भुजाओं के माँस से मेरे वर्ग को भोजन करा देना। यही मेरी वास्तविक श्रद्धांजलि होगी। जिन भुजाओं से दुष्ट रावण ने मेरी बहू को घसीटा है उन भुजाओं को काट काट कर मेरे वर्ग के पक्षियों को खिला देना।

**या गतिर्यज्ञशीलानां आहिताग्नेश्च या गतिः।**

**अपरावर्तिनां या वै या च भूमिप्रदायिनाम्।।**

**मयात्वं समनुज्ञातो गच्छ लोकाननूत्तमान्।**

**गृध्रराज महासत्त्व संस्कृतश्च मया व्रज।।**

पिता जी! आज आपको मैं चार मुक्तियाँ दूँगा। यज्ञशीलों को जो गति मिलती है नित्य अग्निहोत्र करने वालों को जो गति मिलती है, युद्ध में मरने वालों को जो गति मिलती है, भूमिदान करने वालों को जो गति मिलती है एक साथ चारों गतियाँ (सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य) आपको दे रहा हूँ। किसी को चारों गतियाँ एक साथ नहीं मिलीं। सालोक्य दे रहा हूँ मेरे लोक को चलिये, सामीप्य दे रहा हूँ मेरे पास रहा करिये, सारूप्य दे रहा हूँ वैष्णव रूप शंकचक्र गदा पद्म रूप ले लीजिए, सायुज्य अपना हाथ मैंने आपके शरीर पर रख दिया है आप मुझसे चिपक गये। भक्ति भुक्ति और मुक्ति भी आपको मिली। जटायु गद्गद हो गये और राघव से चलने का निवेदन किया। जब राजा बनो तब मेरा श्राद्ध अवश्य करना। राघव ने कहा मैं नहीं भूलूँगा पिताजी।

**संग्रही सनेह बस अधम असाधु को**

**गीध सबरी को कैहो करिहैं सराध को।**

भगवान आनन्दकन्द प्रभु आगे चल रहे हैं। आगे अयोमुखी नाम की राक्षसी ने लक्ष्मण से चिपकना चाहा। अयोमुखी के लक्ष्मण जी ने नाक कान काटे। कबन्ध नामक राक्षस ने भगवान को भुजाओं में घेर लिया तब लक्ष्मण जी ने कहा कि मेरा तो मन है सरकार-



मयैकेन तु निर्युक्तः परिमुच्यस्व राघव।

मां हि भूतबलिं दत्त्वा पलायस्व यथासुखम्।।

इस भूत को मेरी बलि देकर आप यहाँ से चले जाइये। श्रीराम बोले- नहीं लक्ष्मण! मैं अभी इसकी भुजाएँ काट देता हूँ। दोनों ने कबन्ध राक्षस की भुजाएँ काट दीं। कदम्ब ने कहा- सरकार! मैं दम नाम का राक्षस था। इन्द्र ने मेरी जाँघ, मस्तक और मुख सभी वज्र से तोड़ दिये तब मैंने उनसे प्रार्थना की कि अब मैं आहार कैसे ग्रहण करूँगा। प्रार्थना करने पर इन्द्र ने मेरी भुजाएँ एक योजन लम्बी कर दीं और तत्काल ही मेरे पेट में तीखी दाढ़ों वाला एक मुख बना दिया। इन्द्र ने मुझे यह भी बतला दिया था कि जब लक्ष्मण सहित श्रीराम तुम्हारी भुजाएँ काट देंगे उस समय तुम्हारी मुक्ति हो जाएगी और तुम स्वर्ग में आ जाओगे। कबन्ध ने कहा अब आप मुझे जला दीजिए। श्रीराम लक्ष्मण जी ने उसे जलाया। तब कबन्ध बोला आपने पिता (जटायु) का श्राद्ध तो कर दिया पर एक मैया भी आपके पास है जिनका नाम शबरी माता है। भक्ति के गीत गाने चाहिए। शेरों शायरी और कव्वाली को कथा में गाना पाप है। सनातन धर्म भगवान का धर्म है-

धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।

सरोवर के तट पर बैठी शबरी राम जी का नाम रट रही है। शबरी परमभागवत है। उनके विवाह के समय भूतबलि देने के लिए बहुत से पशु इकट्ठे किये गये हैं। शबरी को लगा कि ऐसे विवाह से मुझे क्या लेना देना अतः रात में ही घर छोड़ दिया। भागकर आई मतंग जी के आश्रम में रहने लगीं। चुपके चुपके मतंग जी की बड़ी सेवा की। झाड़ू लगा देना, चटाई बिछा देना यह सब छिपकर कर देती थीं। सन्तों ने कहा हमारे भजन को कौन चुरा रहा है। जब हम

किसी से सेवा लेते हैं तो हमारा भजन समाप्त हो जाता है। समर्थ शरीर हो तो सेवा लेनी नहीं चाहिए। एक दिन सन्तों ने शबरी को पकड़ लिया मतंग ऋषि के सामने लाए काँप रही थीं। पूछा- क्या नाम है तुम्हारा- श्रमणा। ऋषिगण प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया कि किसी न किसी दिन राघव तुम्हारे पास आयेंगे। तभी सहसा श्रीराम लक्ष्मण शबरी के आश्रम में पधारे। शबरी बोली-

अद्य मे सफलं तप्तं स्वर्गश्चैव भविष्यति।

त्वपि देववरे पूज्ये पूजिते पुरुषोत्तमे।

आज मेरी तपस्या सफल हुई आपका सत्कार करके मुझे निश्चय ही आपके दिव्यधाम की प्राप्ति होगी। शबरी ने पूछा- कुछ खाओगे राघव? शबरी खिला रही है भगवान पा रहे हैं। रामरसायनकार कहते हैं:

बेर बेर बेर सराहें बेर बेर बहु  
रसिकबिहारी बेर बेर कहैं टेरि कै।  
हेरि हेरि चाखि चाखि भाखि यह वाहू ते  
महान मीठो लेहु क्यों न बखानत दै फेरि फेरि  
बेर बेर सबरी को देव को बेर बेर  
पुनि रघुवीर बेर बेर कहैं टेरि टेरि  
बेर जनि लाओ बेर लाओ बेर लाओ बेगि  
बेर जनि लाओ बेर लाओ कहैं बेर बेर।

धन्य कर दिया शबरी जी ने। शबरी जी भगवान के सामने लीन हो रही हैं। सन्त ने दोहा गाया-

ब्याह न कीन्हों सपनेहु पति दर्शन नहिं कीन्ह।

शबरी पुत्रवती भई प्रभु गोदी भरि दीन्ह।।

शबरी ने विवाह नहीं किया, स्वप्न में भी पतिदर्शन नहीं किया परन्तु भगवान ने शबरी को पुत्रवती बना दिया।

क्रमशः.....



## श्रीमद्भगवद्गीता ( ७७ )

( गतांक से आगे )

( विशिष्टाद्वैतपरक श्रीराघवकृपाभाष्य )

भाष्यकार-धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर  
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

**व्याख्या-** श्री भगवान् अर्थात् षडैश्वर्य सम्पन्न भगवान् बोले, भगवान् शब्द की मैंने पहले व्याख्या कर दी है। 'रजोगुण समुद्भवः' शब्द में द्वन्द्वगर्भमध्यम पदलोपी बहुव्रीही है। अर्थात् रजोगुण और तमोगुण हैं उत्पत्ति स्थान जिसके ऐसा यह काम ही किसी कारण से व्याहत होने पर यह क्रोध हो जाता है। दोनों ही अति निकट हैं इसीलिए दोनों के प्रति एष शब्द का प्रयोग करते हैं। जब यह शुद्ध काम रहता है तब यह महाशन अर्थात् बहुत भोजन वाला हो जाता है, कभी भोगों से विरत ही नहीं होता, जैसा कि मनु कहते हैं, कामनाओं के उपभोग से कभी काम शांत नहीं होता, वह तो घी की धारा से अग्नि की भाँति अधिकाधिक बढ़ता ही जाता है। अथवा महापुरुष भी जिसका भोजन बन जाते हैं, उसे महाशन कहते हैं। इसीलिये भर्तृहरि ने चुनौती भरे शब्द में कहा, कुछलोग मतवाले गजेन्द्र के गण्डस्थल को विदीर्ण करने में वीर होते हैं और कुछ लोग उन मृगेन्द्रों का बध करने में भी कुशल हो जाते हैं, किन्तु मैं उन बलशालियों के समक्ष घोषणा करके कहता हूँ कि कन्दर्प। अर्थात् काम के दर्प के दलन में बहुत कम लोग समर्थ हो पाते हैं।

फिर यही काम जब क्रोध संज्ञा को प्राप्त करता है तब यह महापाप्मा हो जाता है, पाप्मा शब्द पाप का पर्याय है। जिसमें बहुत पाप हो, अथवा जिससे बहुत पाप हो, अथवा जो स्वयं बहुत पापी हो, वही

महापाप्मा है इस सम्बन्ध में इसी को शत्रु जानो। यहाँ वामनाचार्य के भी विचार द्रष्टव्य हैं।-

महाशनो महापाप्मेत्युभयं लक्षितं क्रमात्।

सर्वभक्ष्योऽप्यसन्तुष्टः कामः क्रोधश्च पातकीः॥

आचार्य वामन कहते हैं कि काम को भगवान् श्री कृष्ण ने महाशन और क्रोध को महापापी कहा क्योंकि काम व्यक्ति का सब कुछ खाकर असन्तुष्ट बना रहता है, और क्रोध भयङ्कर से भयङ्कर पाप करा देता है।

क्रोधोऽपि काम एव स्याद् भेदेऽप्याह्वानरूपयोः।

किन्तु क्रोधस्तमोरूपो ज्ञेयः काम रजोगुणः॥

आह्वान और स्वरूप में भेद होने पर भी क्रोध काम ही है, परंतु क्रोध का स्वरूप तमोगुण है, और काम का स्वरूप रजोगुण।

अत्रैवं सति कृष्णेन क्रोधोऽपि रजसो यदा।

वक्ष्यते सूक्ष्मबुद्धीनां तदा सन्देह उद्भवेत् ॥

ऐसी परिस्थिति में भी यदि भगवान् श्रीकृष्ण क्रोध भी काम ही है ऐसा कहेंगे, तब तो सूक्ष्मबुद्धिवाले लोगों के मन में भी सन्देह हो जायेगा।

तत्रावधेयं कुशलै किमेतत् कामोनु तन्निर्मलमाविलं च।

प्रसन्नमप्येति कमाविलत्वं चलाचलं पंकिलपल्लवस्थम्॥

इस प्रसंग पर कुशल बुद्धिवालों को विचार करना चाहिये, वस्तुतः यह एक ही काम उसी प्रकार दो स्वरूपों में दिखाई पड़ता है जैसे एक ही जल गड्ढे और शुद्ध तालाब में दो प्रकार का दिखाई पड़ता है

अर्थात् गड्ढे में मटमैला और तालाब में स्वच्छ गड्ढे में चंचल और तालाब में शान्त। उसी प्रकार यह काम भी रजोगुण के साथ काम, और यही तमोगुण के साथ क्रोध बन जाता है।

वारो यथाधार इहास्ति पंकस्तथैव वेद्यो रजसस्तमोऽपि।  
क्षुब्धेरजस्याशु ततो नितान्तं क्रोधभ्रमं तत्र तमस्तनोति॥

अर्थात् जिस प्रकार जल कीचड़ से मिलता है उसे मटमैला कहते हैं, उसी प्रकार जब रजोगुण का तमोगुण आधार बन जाता है, तभी काम क्रोध की संज्ञा प्राप्त कर लेता है। तमोगुण के कारण जब रजोगुण अत्यन्त क्षुब्ध हो जाता है, तब तमोगुण क्रोध और भ्रम को उत्पन्न करता है। यहाँ मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि काम और क्रोध इन दोनों की उत्पत्ति में रज और तम ये दोनों कारण होते हैं। परन्तु जहाँ रजोगुण को दबाकर तमोगुण प्रबल पड़ता है वहाँ क्रोध उत्पन्न होता है।

अविद्यमाने सलिले तु शुष्यन् निषद्वरः प्राच्छति मृत्तिकात्वम्।  
स्वान्ते तथैवासति कामलेशे न कोपशंकापि पदं करोति॥

अर्थात् जैसे गड्ढे में जल न रहने पर कीचड़ सूखकर मिट्टी हो जाता है, उसी प्रकार अन्तःकरण में काम के न रहने पर क्रोध की आशङ्का भी नहीं आ पाती।

यावदस्ति जलं तावन्निर्मलं चाविलं तथा।

भासते किन्तु समलमपि कीलालमेव तत्॥

जब तक जल है तब तक वही विमल और समल दीखता है मल के न रहने पर वही विमल, और मल से युक्त होने पर समल, पर है जल ही, ठीक उसी प्रकार जब इच्छा के साथ रजोगुण होता है तब काम और जब उसमें तमोगुण आता है तब वही क्रोध होता है, पर अन्ततोगत्वा है काम ही।

भेदावुभौ जलस्यैव यथाच्छकलुषाभिधौ।

कामक्रोधौ तथा भेदौ रजसः परिकीर्तितौ॥

जिस प्रकार जल के ही निर्मल और मटमैला ये दोनो भेद हैं, उसी प्रकार रजोगुण के ही काम और क्रोध दो भेद कहे गये हैं।

जम्बालेनाविलमिव जलमेवोच्यते पयः।

तमो युक्तस्तथा काम रज एवेति गीयते॥

जिस प्रकार जम्बल अर्थात् सेवाल से युक्त जल को जल ही कहते हैं, उसी प्रकार तमोगुण से युक्त क्रोधसंज्ञक काम को रज ही कहते हैं।

काम एव कथं क्रोध इति चिन्तयतां हृदि।

बोधं गूढतमं कञ्चित् स्फोरयति माधवः॥

काम ही कैसे क्रोध है इस प्रकार का चिन्तन करने वालों के मन में भगवान् श्री कृष्ण कोई गोपनीयतम रहस्य स्फुरित कर रहे हैं।

तमोऽत्र विषयाः ज्ञेयाः हृषीकाणि रजोगुणः।

तद्वासनामयः कामो विषयाधारतो भवेत्॥

यहाँ विषय ही तमोगुण हैं और इन्द्रियाँ रजोगुण, इस प्रकार विषय के आधार से उसी की वासना के कारण काम उत्पन्न होता है अर्थात् उत्पत्ति में विषय सहायक बनता है, पद-आधार इन्द्रियाँ ही होती हैं, जो राजस हैं।

भूमौ यद्वत्स्थिवति जले यात्यसौ पंकभावम्।

कालुष्यं द्राग् भजति च तदाधारमेवाभ्रपुष्टम्॥

पात्रेऽन्यस्मिन्निहितमिह तन्नाविलत्वं जिहीते।

तद् व्युद्युक्तः स हरिभजने क्रोधतां नैतिकामः॥

जैसे जब जल पृथिवी पर स्थित रहता है तो जल के सम्पर्क से वही पृथ्वी का अंश कीचड़ बन जाता है, फिर वही गड्ढे में पड़ा हुआ आकाश के सम्पर्क से मलिन दिखाई पड़ता है। किन्तु उसी को

यदि शुद्ध करके दूसरे स्वच्छ पात्र में रख दिया जाय तो वह मलिन नहीं रह जाता, उसी प्रकार से यदि इसी काम को भगवान के भजन से जोड़ दिया जाये तब क्रोध नहीं बन सकता।

हरिभक्तिकुठारोऽसौ छिनत्ति भवकाननम्।

तदुद्भवं कामकाष्ठं किन्तु तत्र नियोजयेत्॥

भगवान की भक्ति का कुल्हाड़ा संसाररूप वन को काट डालता है। किन्तु भक्ति के कारणरूप काम को उसमें काष्ठदण्ड की भाँति भक्ति में जोड़ देना चाहिये।

कामो निर्विषयस्तत्र नितान्तं रजसो लयः।

उदये शुद्धसत्त्वस्य भक्तिरित्यभिधीयते॥

वहाँ काम विषय शून्य हो जाता है, और रजोगुण का नितान्तलय हो जाता है। इस प्रकार शुद्ध सत्त्वगुण का उदय होने पर वही काम भक्ति बन जाता है।

यः कामो विषयाश्रितस्तु बलवान् स ज्ञानमार्गे रिपुः।

प्रारब्धं हि बलेन तस्य विषयेष्वासञ्जयत्यञ्जसा॥

वैराग्यप्रवणानपि क्षणमतोऽनिच्छन्त एते क्वचित्।

पापं चापि चरीकरीति भगवांस्तयानिन्दया॥

जो काम विषयों का आश्रय करता है, वही ज्ञानमार्ग में बलवान शत्रु बन जाता है, और वह प्रारब्धवशात् ज्ञानी के मन को उसी के विषयों में लगा देता है। वैराग्य में लगे हुए ज्ञानी जनों को भी यह एक क्षण में डिगा देता है, इसीलिये वे इच्छा न करके भी पाप कर बैठते हैं, भगवान ने इसीलिये उसकी निन्दा की।

इस प्रकार आचार्य वामन की गवेषणा और अपने चिन्तन के आधार पर मैं यह कह सकता हूँ कि भगवान यहाँ यही कहना चाहते हैं कि समस्त पापों का बाप है काम, और उसका भी बाप है रजोगुण,

अतः निष्काम कर्मयोगरूप भगवदाराधना से रजोगुण के समाप्त होने पर काम स्वयं समाप्त हो जायेगा, और फिर कोई पाप ही नहीं हो सकेगा॥श्री॥

संगति- काम ज्ञान का कैसे बैरी है? इस पर

भगवान काम के आवरण का प्रकार कहते हैं।

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च।

यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्॥३॥३८

रा० कृ० भा० सामान्यार्थ- हे अर्जुन! जिस प्रकार धूम के द्वारा अग्नि ढक लिया जाता है और जिस प्रकार दर्पण मल के द्वारा आवृत रहता है उसी प्रकार यह ज्ञान इस इच्छा नामक काम के द्वारा यह ज्ञान ढक जाता है।

व्याख्या- यथा आदर्श यह पदच्छेद है। आव्रियते शब्द आवृत होकर आदर्श शब्द के साथ भी अन्वित होगा। यहाँ क्रम से तीन उपमान युगल का प्रयोग हुआ है। धूम अग्नि, दर्पण मल, उल्ब और गर्भ। ठीक इसी प्रकार तीनों स्थलों पर काम और ज्ञान उपमेय है। ज्ञान तीन प्रकार का है, परमात्मा विषयक, जीवात्म नित्यत्व विषयक और संसारनित्यत्व विषयक। इसी प्रकार काम की भी तीन अवस्थायें हैं। इन्द्रियाश्रय, मानसआश्रय, और बुद्धिआश्रय। इन्द्रियाश्रय काम धूम के समान प्रकट होकर अग्निवत् प्रकाशमान परमात्म विषयक ज्ञान को ढक लेता है। और मानस आश्रय काम मल के जैसे उत्पन्न होकर दर्पण के समान प्रतिबिम्बावभासक जीवात्मा के नित्य ज्ञान को ढक लेता है। और बुद्धिआश्रय काम जरायु की भाँति सूक्ष्म होता है और यह गर्भ के समान चेतनावान परन्तु अस्पष्ट संसार के अनित्यत्व ज्ञान को ढक लेता है। यह मेरी नवीन उद्भावना है।

क्रमशः.....

(गतांक से आगे)

## सकल अमानुष करम तुम्हारे

□ धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर  
जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज

यह अंधकार है। और अंधकार को चन्द्रमा नहीं मिटा सकते, सूर्य ही मिटाएँगे। और सूर्यकुल के सूर्य राम जी विराज रहे हैं। जब तक रामचन्द्र जी चन्द्रमा रहेंगे तब तक उनसे भी नहीं टूटेगा। क्योंकि- 'राकापति षोडश उअहिं, तारागन समुदाइ। सकल गिरिन उव लाइय, बिनु रवि राति न जाई।' अभी रामचन्द्र जी भी राकेश हैं 'राजसमाज बिराजत रूरे। उडुगन महँ जनु जुग बिधु पूरे।' ये रामचन्द्र जी चन्द्रमा हैं, राजागण नक्षत्र हैं, शहर हैं। भगवान ने कहा- कोई बात नहीं, जब तक मैं चन्द्रमा रहूँ, इनको रहने दो, आनन्द लेने दो। ये उठाना चाहते हैं। तारागणों से कहीं अन्धकार मिटता है?-'तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप, उठइ न चलहिं लजाइ।' और वास्तव में तारागण तब होते हैं जब चन्द्रमा का भी प्रकाश धूमिल पड़ जाता है। भगवान थोड़ा पीछे पड़ गए। सब तारागण इकट्ठे हो गए। और गरुअ होता जा रहा है। 'मनहुँ पाइ भट बाहुबल, अधिक अधिक गरुआइ।' तब गोस्वामी जी ने बहुत सुंदर बात कही- नहीं उठेगा। बोले- 'भूप सहस दस एकहिं बारा। लगे उठावन टरइ न टारा।' तब ९० हजार राजाओं ने सोचा। ऐसा करो, चलो पहले धनुष को तोड़ तो लें। फिर विवाह के लिए लड़ेंगे, जो जीतेगा वह विवाह कर लेगा। ९० हजार राजा उठा रहे हैं, ऐसा कभी आपने देखा था? एक साथ। पर क्यों उनसे उठता? उठ ही नहीं सकता उनसे। सब का बल समाप्त, 'जैसे बिनु बिराग संन्यासी।' बिना वैराग्य के संन्यासी। और भगवान

राम तो 'अग जगमय सब रहित बिरागी। प्रेम ते प्रकट होंहि जिमि आगी।' क्या बात है! टूटेगा ये? सब श्री हत हो रहे हैं। 'श्रीहत हुए हारि हिय राजा।' और रामचन्द्र तो श्रीपति हैं। कोई नहीं उठा पा रहा था। और दूसरी बात पर यहाँ ध्यान दीजिए कि बाणासुर और रावण ने संधि कर ली कि हम दोनों उठा लेते हैं। 'भूप सहस्र दस' यहाँ व्यंजना है। सहस्र माने सहस्रबाहु वाले बाणासुर और दस माने दस सिर वाला रावण, ये दोनों एक साथ उठाना चाहे, फिर भी नहीं उठा। इतना कठिन क्रमव्यूह। सारी सभा स्तब्ध। 'सकल अमानुष करम तुम्हारे' देखिएगा। अब सभा विसर्जित होनी है। जनक जी ने कह दिया। नहीं, कुछ नहीं। 'द्वीप द्वीप के भूपति नाना। आए सुनि हम जो पन ठाना।' हमने बुलाया किसी को नहीं। 'देव दनुज धरि मनुज शरीरा।' अरे देवता और दानव भी मनुष्य शरीर धारण करके आए। परन्तु- 'कुअँरि मनोहर बिजय बड़, कीरति अति कमनीय। पावनहार विरंचि जनु, रचेउ न धनु दमनीय।' जनक जी ने कहा- लगता है कि मनोहरी कुमारी, अत्यन्त कमनीय कीर्ति उनको पाने वाले की रचना ब्रह्मा ने नहीं की। लगता है कि धनुष तोड़ने वाले को ब्रह्मा ने नहीं बनाया। सरस्वती ने कहा- बिल्कुल ठीक कहा। ब्रह्मा ने नहीं, ब्रह्मा के बाप ने भी नहीं बनाया। ब्रह्मा की बात छोड़ो। ब्रह्मा का बाप कौन है?-'विष्णु, वे भी नहीं बनाए हैं। इसलिए, चले जाओ- 'तजहु आस'। क्योंकि किसी ने धनुष चढ़ाया नहीं। 'रहेउ चढ़ाउब तोरब भाई। तिल

भरि भूमि न सकेउ छुड़ाई।' चढ़ाना और तोड़ना तो बहुत दूर रहा, पर कोई इसे तिल भर पृथ्वी से अलग नहीं कर पाया। इसलिए हे वीरो, अब तुम दुखी मत होना- 'अब जनि कोउ माखै भट मानी। वीर बिहीन मही मैं जानी।।' अब कोई भी व्यक्ति अपने मन में दुःखी न हो, क्रुद्ध न हो। मैंने पृथ्वी को वीर-विहीन जान लिया। लक्ष्मण ने कहा- सरकार, एक बात बताइए। लक्ष्मण जी ने कहा- सरकार, आप तो जानते हैं कि आप ही को धनुष तोड़ना है। तो जनक जी से इतना बड़बड़वा क्यों रहे हैं आप? इतना जनक जी को आप सता रहे हैं, इतना रुला रहे हैं, अच्छी बात है क्या? राम जी ने कहा- तुम नहीं समझ रहे हो। बताओ, किसी नभोमण्डल में एक साथ दो सूर्य उदित हो सकते हैं? कहा- जब नहीं हो सकते, तो इसी मिथिला में जनक जी का जो ज्ञान है न- 'जासु ज्ञान रवि भव निशि नाशा।' जनक जी का ज्ञान भी रवि है और मुझे भी अभी सूर्य बनना पड़ेगा। तो पहले एक सूर्य अस्त हो तब न दूसरा सूर्य उदित होगा। इसलिए मैंने अपनी लीला से जनक जी के सूर्य को अस्त किया। चलो, पहले थोड़ा अज्ञान हो जाने दो। अब कोई सूर्य नहीं रहना चाहिए तब मैं उदित होऊँगा। और दूसरी बात, सूर्य कब उदित होता है? जब थोड़ी लालिमा होती है। अर्थात्, जब तुम क्रोधित होगे तब न सूर्य उदित होगा। इसलिए, जनक जी के ज्ञान रूप सूर्य को अस्त किया, इससे मर्यादा न टूटे कि सूर्य उदित होना है। और जब कहा- 'तजहु आस निज निज गृह जाहू। लिखा न बिधि बैदेही बिबाहू।' सब लोग आसा छोड़ दो। अपने-अपने घर चले जाओ। विधाता ने जानकी जी का विवाह

नहीं लिखा है। जनक जी कहते हैं कि यदि मैं जानता कि पृथ्वी पर वीर नहीं है तो प्रतिज्ञा करके मैं हँसी न उड़वाता। अब लक्ष्मण को क्रोध आ गया। 'भाखे लखन कुटिल भई भौहें।' क्या बात करते हैं! कुटिल हो गयी भौहें। 'रदपट फरकत नयन रिसौहें।' अहाहा! क्या बात है!! क्रोध से बिल्कुल फड़क गए हों और नेत्र बिल्कुल क्रुद्ध हो गए उनके। लाल हो गए लक्ष्मण। नेत्र बिल्कुल लाल, अरुण निकल आया। आप ध्यान से सोचिये और लक्ष्मण जी ने कह दिया। क्या विचित्र समस्या है। देखिए, अन्य स्वयंवरों जैसा यह स्वयंवर नहीं है। अन्य स्वयंवरों में वर कितना निर्बल है और यहाँ कितना प्रबल है यह वर। एक वाक्य केवल जनक जी ने कहा है- 'वीर बिहीन मही मैं जानी।।' लक्ष्मण कहा- नहीं। 'कही जनक जस अनुचित बानी।' अध्यक्षीय भाषण अब हो चुका। अयोध्या का राजकुमार है, क्या बात करते हैं! कहा- नहीं। रघुवंशियों में जहाँ कोई रहता है ऐसा अभद्र वाक्य कोई नहीं कहता। 'विद्यमान रघुकुलमनि जानी।।' राघवेन्द्र जी को इस सभा में विद्यमान जानकर भी जनक जी ने जैसी अनुचित बानी कही, ऐसा कोई नहीं कहता। जनक तुमको क्या पता है- 'वीर बिहीन मही मैं जानी।।' वीरता की परिभाषा हमसे सीखिए। ये ब्रह्मसूत्र की पंक्तियाँ नहीं हैं ये तो हथियार चलाने का प्रकरण है भगवन! 'सुनहु भानुकुल पंकज भानू।' ललकार दिया। ये धनुष अंधकार है और आप सूर्यकुल के सूर्य हैं, उदित हो जाइए। मैं अरुण हूँ। देखिए, लक्ष्मण जी ने क्यों कहा कि मैं धनुष को तोड़ सकता हूँ? नियम यही है कि अंधकार को अरुण ही नष्ट करते हैं, सूर्य नहीं नष्ट करते। 'यावत्प्रतापनि-

धिराक्रमते न भानुरहनायतावदरुणेन तमो निरस्तं!’ आज सुना देते हैं। रघुवंश महाकाव्यम् के ५वें सर्ग के ७१वें श्लोक में कालिदास कहते हैं- ‘यावत्प्रताप-निधिराक्रमते न भानुरहनायतावदरुणेन तमो निरस्तम्। जब तक सूर्य नारायण नहीं तब तक तो अरुण ही अन्धकार दूर कर देते हैं। इसलिए रामजी के पहले लक्ष्मण जी कहते हैं कि मैं धनुष तोड़ सकता हूँ। इसीलिए कह दिया। अरुण अंधकार को दूर कर सकते हैं। उसी दृष्टि से लक्ष्मण ने कहा- ‘जौ तुम्हार अनुशासन पावौं। कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं।। अगर आप का अनुशासन मिल जाए, तो धनुष की बात छोड़ दीजिए, इस ब्रह्मांड को मैं गेंद की भाँति उठा लूँ। ‘काचे घट जिमि हारौं फोरी।’ इसे पटक दूँ। काहे भैया? ब्रह्मांड काहे को फोड़ना चाहते हैं? बोले- इसलिए कि ये कच्चा घड़ा है। क्यों? कहा कि जो ब्रह्म को नहीं जान सका, वह पक्का घड़ा कैसे हो सकेगा? जिस ब्रह्मांड में ब्रह्म का अपमान हो रहा है वो पक्का घड़ा थोड़े हो सकता है। इसे पटक दो, फूटे ससुरा! मैं सुमेरु पर्वत को मूली की तरह तोड़ सकता हूँ। पर ‘तव प्रताप महिमा भगवाना।’ हे भगवान, देखिए आज पहली बार भगवान बोल रहे हैं। विश्वामित्र तो मन में कहे थे- ‘प्रभु ब्रह्मण्यदेव मैं जाना। मोहि नित पिता तजेउ भगवाना।।’ आज जनक सभा में ललकारकर कहते हैं लक्ष्मण- ‘तव प्रताप महिमा भगवाना। का बापुरो पिनाक पुराना।।’ का बापुरो पिनाक, ये बपुरा है, ये बेकार का पुराना धनुष क्या है ये, जिसने इसे जड़ किया है। एक क्षण में मैं इसे तोड़ सकता हूँ, आप आज्ञा दीजिए; पर जनक से कहिए संशोधन करे प्रतिज्ञा में। जनक ने प्रतिज्ञा की है कि जो धनुष तोड़ेगा उसके साथ सीता जी का

विवाह होगा और मैंने प्रथम दृष्टि में सीता जी को माँ मान लिया है। जनक जी यदि प्रतिज्ञा में संशोधन कर लें कि लक्ष्मण जी के धनुष तोड़ने पर भी सीता जी का विवाह राम जी के साथ होगा तो मैं धनुष तोड़ता हूँ। ये विवेक देखिए। राम-कथा का यही व्यक्तित्व है। ‘मेरो अनुचित न कहत लरिकाई’ (गीतावली रामायण) बस पन परिमिति कछु आनि भाँति सुनी गयी है’ अर्थात् जो धनुष तोड़ेगा उसके साथ विवाह होगा। ‘नतरु प्रभु प्रताप उतरु चढ़ाइ चाप देत्यो पै देखाइ बल फल पापमयी है।’ मैं धनुष को चढ़ा सकता हूँ। पर फल इसका पापमय हो जायगा, अनर्थ हो जाएगा। मैंने माँ मान लिया है सीता जी को। सीता जी गद्गद हो रहीं हैं। अहाहा, बेटे, इतनी मर्यादा, यदि प्रथम दृष्टि में तुमने मुझे माँ मान लिया है तो सीता जी कहती हैं कि जो वात्सल्य तुम्हें मिलेगा वह लवकुश को भी नहीं मिलेगा। अद्भुत आनन्द है। आज आनन्द हो रहा है। लक्ष्मण कह रहे हैं- ‘नाच जानि अस आयसु होऊ। मैं कमलदण्ड की भाँति चढ़ाकर दौड़ता हूँ १०० योजन तक। ‘तोरौं छत्रकदण्ड जिमि, तव प्रताप बल नाथ। जौ न करौं प्रभु पद शपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ।।’ यहाँ ‘कर न धरौं’ पाठ गलत है, ‘पुनि न धरौं’ पाठ है। मैं धनुष छूऊँगा नहीं फिर। पृथ्वी डगमगायी भी तो। कुछ भी हो, एक विचित्र क्रम बना। लक्ष्मण जी को राम जी ने कहा- शांत रहें, शांत रहें। उन्होंने कहा- क्यों प्रभु? आपका अपमान किया है इन्होंने। राघव जी ने कहा- क्या अपमान किया है, बताओ उन्होंने कहा- ये कह रहे हैं ‘बीर बिहीन मही मैं जानी’- कैसे कहा? राघव जी ने कहा- लक्ष्मण, जनक जी बिल्कुल ठीक कह रहे थे।

क्रमशः.....



गतांक से आगे-

## ‘काका विदुर’ ( हिन्दी खण्डकाव्य )

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

बानी नित्य आपकी सुकीर्ति गाथा गाया करें,  
माधव मुखचन्द्र के चकोर दृग हमारे हों।  
कान सदा सुनें सरस लीला तुम्हारी देव,  
कर तव पद पद्मपूजा दिव्य व्रत धारे हों।  
शीशनित्य नमे तेरे पदपंकज में मुकुन्द,  
“गिरिधर” के हित तेरे भक्त ही सहारे हों।  
जहाँ जहाँ जन्में हम पूर्वकर्म अनुसार,  
वहाँ वहाँ नाथ नित्य परिकर तुम्हारे हों।।१०४।।  
विनय यूँ सुनाके भरे सलिल विलोचन युग,  
गहे पद कंज अंक प्रभु को बिठलाये हैं।  
भावुक विदुर के सुधासाने बर बैन सुनि,  
कृपा सिंधु लोचन में नीर भरि आये हैं।  
कृपाकंद ब्रजचन्द आनंदकंद आनंद में,

उमगि करकंज से उठाय उर लाये हैं।  
मानो नील नीरद मिलत श्वेत पंकज से,  
“गिरिधर” यह झाँकी देख अनुपम सुख पाये हैं।।१०५।।  
कर जोड़ फिर दंपति मुदित प्रभु से विनय करने लगे,  
गद्गद हुआ कल कंठ उनका सरस बचन सुधा पगे।  
गीता गुरो आनन्दसिंधो नाथ यह वर दीजिए,  
संतत हमारे मन बिपिन में आप विहरण कीजिए।।१०६।।  
कह एवमस्तु मुकुन्द ने संतोष दम्पति को दिया,  
आदेश ले प्रस्थान पाण्डव शिविर को प्रमुदित किया।  
इस ललितगाथा से पुनः शुभ शांति कृष्णा को दिया,  
गीता निदेशक का कथा रस दास “गिरिधर” ने पिया।।१०७।।  
हे मुकुन्द करुणानिधे, कृष्णचन्द्र घनश्याम।  
“गिरिधर” मानस भवन में, करो सदा विश्राम।।१०८।।

□□□

## पूज्यपाद जगद्गुरु जी के आगामी कार्यक्रम

□ प्रस्तुति-पूज्या बुआ जी

दिनाङ्क	विषय	आयोजक तथा स्थान
०१ मार्च २००९ से ०९ मार्च २००९ तक	श्रीरामकथा सायं ३ से ६ बजे	श्री सनकादिक देवनारायणदास, देवपत्नम, काठमाण्डू, नेपाल। फोन-०९७७-९७४७०२२००९
१६ मार्च २००९ से २२ मार्च २००९ तक	श्रीमद्भागवतकथा प्रातः ९:३० से १:३० तक	गीताभवन नं० ३ घाट पर स्वर्गाश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड) आयोजक- श्री नारायण डालमिया
२७ मार्च २००९ से ०४ अप्रैल २००९ तक	श्रीरामकथा सायं ३ से ६ बजे	श्रीतुलसीपीठ, आमोदवन चित्रकूट, जि-सतना (म० प्र०)। श्री रामनवमी महोत्सव।



## सत्कर्म करिए, रोग भगाइए

□ श्री जगदीशप्रसाद गुप्त (जयपुर)

शरीर स्वस्थ रहे, शरीर की रक्षा होती रहे, यह मनुष्य का प्रथम धर्म है क्योंकि समस्त धर्म-साधन का आधार यह शरीर ही है- “शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्”। मनुष्य-योनि में चतुर्विध पुरुषार्थ (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) प्राप्त करना ही मानव-जीवन की उपलब्धि है और यह तभी सम्भव है, जब शरीर स्वस्थ रहे। कहने का तात्पर्य यह है कि पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति का मूल कारण शरीर का नीरोग रहना है और आरोग्य का अपहरणकर्ता रोग है, जो श्रेयस और जीवन का विनाश करते हैं-

**धर्मार्थकाम मोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्।।**

**रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च।**

(चरक० सू० १/१५-१६)

प्रसिद्ध लोकोक्ति है- “पहला सुख निरोगी काया”। वास्तव में, सभी प्रकार के धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्य शरीर के स्वस्थ होने पर ही पूरे होते हैं। शरीर के अस्वस्थ रहने पर मनुष्य चाहता हुआ भी कुछ नहीं कर सकता। इसलिए, अन्यान्य कार्यों को छोड़कर सर्वप्रथम शरीर की देखभाल करे, शरीर का अभाव होने पर सब कुछ का अभाव हो जाता है-

**सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत्।**

**तदभावे हि भावानां सर्वाभावः शरीरिणाम्।।**

शरीर स्वस्थ रहे, अस्वस्थ न रहे। न चाहते हुए भी शरीर अस्वस्थ हो जाता है। क्यों? चिकित्सा शास्त्र कहता है-

१. प्रायः बाह्य तथा आन्तरिक शारीरिक रोगों की उत्पत्ति मिथ्या आहार-विहार के कारण होती है।

२. कुछ रोग संक्रामक अर्थात् स्पर्शजन्य होते हैं, जैसे- हैजा, प्लेग, चेचक, नेत्र-पीड़ा, खाँसी आदि।

३. कुछ रोग (कष्ट) दुर्घटना जनित होते हैं, जैसे- विष-प्रयोग, शस्त्राघात, पशु-पक्षी द्वारा आघात, सर्प-दंश, पानी में डूबना, ऊँचे स्थान से गिरना, सड़क-रेल-वायुयान दुर्घटना आदि।

४. भय, चिन्ता, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, हत्या अथवा आत्महत्या की प्रवृत्ति के अन्तर्गत मानसिक रोग।

५. जन्मजात रोग, जैसे- बधिरता, अंधत्व, काण्ठ, गूंगापन, अंग-वैकल्य, नपुंसकता, वन्ध्यत्व आदि।

हमारे शास्त्रों की मान्यता है कि पूर्व जन्म के शुभाशुभ कर्मों के अनुसार ही सुख, दुख, रोग, शोक तथा दारिद्र्य आदि प्राप्त होते हैं। पूज्य गोस्वामी जी ने श्रीरामचरितमानस में अयोध्याकाण्ड में कहा है-

**करम प्रधान बिस्व करि राखा।**

**जो जस करइ सो तस फल चाखा।।**

जन्म-जात रोग पूर्व-जन्म में किए हुए पाप-कर्म ही होते हैं। पैतृक रोगों के मूल में भी यही कारण रहता है। आकस्मिक दुर्घटनाएं भी कर्मफल ही हैं। अधिकांश, सामान्य रोग वर्तमान जीवन के कुसंस्कारों- मिथ्या आहार-विहार, अशुभ कर्म के फलस्वरूप होते हैं।

रोग निवारण के उपायों की चर्चा हमारे इन तीन शास्त्रों- १. ज्योतिष-शास्त्र २. आयुर्वेद शास्त्र और ३. मंत्र-शास्त्र में की गई है। ये तीन शास्त्र एक दूसरे के पूरक तथा अन्योन्याश्रित हैं। ज्योतिष-शास्त्र यही बता सकता है कि अमुक व्यक्ति को कौन सा रोग है या होगा; उसका क्या समयावधि है, रोग ठीक होगा या नहीं और ठीक होगा तो कब। इससे सम्भावित रोग की पूर्व-सूचना मिलने से वह सावधान हो सकता है और कष्ट सहन की क्षमता अर्जित कर सकता है।

इससे अधिक, रोग निवारण के उपाय बताना। रोग दूर कराना उसका विषय नहीं है, क्षेत्र नहीं है, एकमात्र छलावा है, ठगना है और रोगी को भ्रमित करना है। आयुर्वेद शास्त्र अर्थात् चिकित्सा-शास्त्र औषध-प्रयोग, शल्य-क्रिया आदि उपायों द्वारा रोग दूर करने का प्रयत्न करता है। अन्त में, जब रोग चिकित्सा-शास्त्र की सहायता से भी दूर नहीं हो पाते, उनसे छुटकारा पाने के लिए मन्त्र-शास्त्र आध्यात्मिक-उपायों का सम्बल देता है।

वस्तुतः, चिकित्सा तथा आध्यात्मिक उपायों द्वारा रोग दूर हो जाते हैं। जीवन भर शुभ कर्म करे और आहार-विहार को संयमित रखे, ऐसा व्यक्ति सदैव निरोग और सुखी रहता है, यहाँ तक कि पूर्व जन्म के दोषों का प्रक्षालन करने में भी सफल हो जाता है। अर्थात् पूर्व-जन्म के अधिक पाप-फल वर्तमान जीवन के शुभ कृत्यों से कम हो जाते हैं, भविष्य सुखमय व आरोग्यमय बनता है। इसी प्रकार, पूर्व जन्म के पुण्य-फल से वर्तमान जीवन में रोग-शोक, दुर्घटना आदि के शिकार नहीं बन पाते। यदि वर्तमान जीवन में अशुभ कर्म करता है तो उसको अगले जन्म में दुष्परिणाम अवश्य ही भोगने पड़ेगे, यद्यपि वर्तमान जीवन निरोगी और सुखी रहे। हिन्दु-दर्शन के अनुसार प्राणी अपने जन्म जन्मान्तर के शुभाशुभ कृत्यों का फल जन्मांतरों तक भोगता रहता है। अतः जो लोग आरोग्य एवं सुखी जीवन के इच्छुक हो उन्हें सदैव शुभ कृत्यों में ही प्रवृत्ति रखनी चाहिए तथा छोटे से छोटे दुष्कृत्य का भी फल मिलना अवश्यम्भावी जानकर उनसे बचे रहना चाहिए।

रोग-निवारण के लिए चिकित्सा (treatment) अति महत्वपूर्ण कर्म है, सत्कर्म है। भूत, वर्तमान और भावीजीवन के सत्कर्मों से चिकित्सा की सोपान बनती है। चिकित्सा से रोग का निवारण होता ही है, अगर निवारण नहीं होता है तो उसे भव-रोग समझिए,

भोगना है, एकमात्र परात्पर पुरुष, परमात्मा के आश्रय में, उनके स्मरण में। यहीं से मन्त्रशास्त्र में वर्णित आध्यात्मिक-उपायों की शृंखला प्रारम्भ होती है। भगवन्नाम-स्मरण ही रोगों के निवारण का सरलतम तथा श्रेष्ठतम उपाय है। उल्लेखनीय है-

१. भगवान् धन्वन्तरि के आदेश से भगवान् के तीन अमोघ-मन्त्रों के जप से सभी प्रकार के रोगों से तथा शारीरिक एवं मानसिक कष्टों से सभी व्यक्तियों को मुक्ति मिलती है; यथा-शक्ति जप करते रहना चाहिए:-

ॐ अच्युताय नमः

ॐ अनन्ताय नमः

ॐ गोविन्दाय नमः

हमारे हिन्दु-शास्त्र में उल्लेख है कि औषधि के रूप में अच्युत, अनन्त तथा गोविन्द के नामों का उच्चारण करने से सचमुच सभी रोग नष्ट हो जाते हैं-

अच्युतानन्त गोविन्द नामोच्चारण मेषजात।

नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।

(अर्थात् औषधि के रूप में अच्युत, अनन्त तथा गोविन्द के नामों का उच्चारण करने से सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, यह मैं सत्य कहता हूँ, सत्य कहता हूँ।)

इतना ही नहीं, इनका (भगवान् के तीन नाम मंत्रों का) जप करते रहने से अनेक लौकिक कार्यों में सफलता मिलती है।

२. गीता में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।

अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।

(अर्थात् -समस्त कर्तव्य कर्मों का त्याग करके तुम मुझ एक परमात्मा की शरण में आ जाओ। मैं तुम्हें सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तुम शोक मत करो।)

३. “श्रीदुर्गासप्तशती” (१२/२१-२२) में माँ भगवती दुर्गा स्वयं अपने मुखारविन्द से कहती हैं- “उत्तम सामग्रियों द्वारा पूजन करने से, ब्राह्मणों को भोजन कराने से, होम करने से, प्रतिदिन अभिषेक

करने से, नाना प्रकार के अन्य भोगों का अर्पण करने से तथा दान देने आदि से एक वर्ष तक जो मेरी आराधना की जाती है, उससे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता मेरे इस उत्तम चरित्र का एक बार श्रवण करने मात्र से हो जाती है। श्रवण किया हुआ यह माहात्म्य पापों का हरण करता है और आरोग्य प्रदान करता है-

विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम्।

अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या।।

प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन् सकृत्सुचरिते श्रुते।

श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति।।

४. ज्योतिष्पीठ के ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य अनन्तश्री स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी महाराज कहते थे कि रामनाम के निम्न अमोघ मन्त्र के जप एवं स्मरण से मनुष्य के पापों का क्षय, रोग निवृत्ति एवं सुख-शान्ति प्राप्त होती है:-

“श्री राम जय राम जय जय राम”

५. “श्रीरामरक्षास्तोत्रं” में उल्लेख हुआ है-

“आपत्तियों को हरने वाले तथा सब प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करने वाले लोकाभिराम भगवान राम को बारम्बार नमस्कार करता हूँ”-

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।  
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्।।

( ३५ वाँ )

६. महर्षि वाल्मीकि राम-राम के स्थान पर मरा-मरा जपकर अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न, व्याधियों से मुक्त तथा रामायण महाकाव्य के रचियता हुए। परमपूज्य गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने लिखा है-

उलटा नाम जपत जग जाना।  
बालमीकि भए ब्रह्म समाना।।

(रामचरितमानस-अयोध्याकांड-१९४(८))

७. अनेक सन्तों ने “श्रीराम” नाम के स्मरण

को ही सब रोगों का अचूक इलाज बताया है। कहा गया है- रामनाम की औषधि खरी नीयत से खाया। अंग रोग ब्यापै नहीं, महारोग मिट जाय।

८. पूज्य गोस्वामी तुलसीदास जी के श्रीरामचरितमानस की निम्न चौपाई को जपकर तीनों प्रकार के तापों को शमन करते हैं-

दैहिक दैविक भौतिक तापा।

राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।

(उत्तरकाण्ड-२१(१))

श्रीरामचरितमानस में सभी शास्त्र भरे हुए हैं। मानस की एक-एक चौपाई सिद्धमन्त्र हैं- प्रतिदिन रामायण पाठ करिए, लाभ उठाइये। श्रीरामचरितमानस की श्रेष्ठता पर एक अतिरोचक तथा भक्ति-भाव पूर्ण प्रसंग है-

श्रीतुलसीदास गोस्वामी जी और बाबा सूरदास जी समकालीन सन्त हुए हैं। एक भक्त जिज्ञासु ने बाबा सूरदास जी से पूछा- “बाबा! कविता आपकी अच्छी है या गोस्वामी तुलसीदास जी की।” बाबा बोले- “बेटा। कविता तो मेरी अच्छी है।” जिज्ञासु कहने लगा- “बाबा! गोस्वामी जी की रामायण सभी के घर-घर पढ़ी जाती है, क्या वह अच्छी नहीं है?” बाबा ने फटकारा- “अरे पगले! कविता तो मेरी अच्छी है, उनकी रामायण क्या कोई कविता है? अरे! वे तो मंत्र हैं, मंत्र।”

अब, इस लेख को विराम देते हुए, यह लिखना अतिशयोक्ति नहीं है कि आज के कलियुग में एकमात्र प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद गोस्वामी जी महाराज द्वारा रचित “श्रीहनुमान चालीसा” के दैनिक पाठ से सभी रोगों से मुक्ति और सभी सुखों की प्राप्ति होती है-

नासै रोग हरै सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा।।  
संकट कटै मिटै सब पीरा। जो सुमिरै हनुमत बलबीरा।।

श्रद्धा और विश्वास होना चाहिए-तभी कल्याण होगा। □□□

## शान्ति की ओर

□ पुष्पेन्द्र कुमार मिश्र ( कम्प्यूटर सहायक )

शान्ति का स्रोत है, अचल ब्रह्म का ज्ञान।  
मानव! अपने जीवन के, पर्दे में पहचान।।  
अचल ब्रह्म चंचल मन को, शीघ्र एकाग्र करता है।  
चंचल अचल के मिलन से, जीवन बदल जाता है।।

शान्ति का स्रोत सबके अन्दर अविनाशी आत्मा के रूप में विद्यमान है। लेकिन मन शान्ति को संसार के विज्ञान में खोज रहा है। संसार के विज्ञान का अपना भौतिक महत्व है। उससे मानव को कई प्रकार की शारीरिक सुविधाएँ मिल रही है। टेलीफोन, टेलीविजन, यातायात के साधन, बिजली की शक्ति, कम्प्यूटर आदि विज्ञान के चमत्कारों को देख-देख कर मन बाह्य रंग हो गया है। जितना ही भौतिक संसार का विकास बढ़ता जा रहा है, उतनी ही विश्व मानव की अशान्ति बढ़ती जा रही है। बाहर का विकास तेज हो रहा है, परन्तु अन्दर आत्मा का विकास सबका रुका हुआ है। आत्मा के विकास से अमृत, दया, प्रेम प्रकट होता है। तभी मानव को पूर्ण शान्ति मिलती है।

आत्म ज्ञान पर सबका बराबर का अधिकार है। यहाँ जाति-पाँति, छूत-अछूत का कोई भेदभाव नहीं होता है। जैसे- सूर्य का प्रकाश सबको बराबर प्रकाशित करता है। उसी प्रकार आत्मा रूपी सूर्य सभी जीवों के अन्दर समान प्रकाश देकर मोह एवं अंधकार को दूर करता है। आत्मा का प्रकाश सबके अन्दर पवित्र विवेक व निःस्वार्थ प्रेम को प्रकट करता है। तभी संसार का स्वार्थमय प्रेम का लगाव समाप्त होता है।

आत्मा के प्रकाश को इन चर्मचक्षुओं से नहीं देखा जा सकता है, और न ही वह किसी विज्ञान के

यंत्रों द्वारा देखना सम्भव है। समय के तत्त्वदर्शी पूर्ण सन्त, ज्ञान दृष्टि देकर आत्मा अविनाशी का साक्षात् अनुभव कराते हैं। तभी मानव का मोह, अंधकार व अशान्ति समाप्त होती है। यह ज्ञान भारत में पहले भी था, अब भी है, और आगे भी रहेगा। इसलिए भारत को विश्व मानव ने अध्यात्म मन्दिर बताया है। मन मन्दिर में ज्ञान के दीपक जलाने वाले सन्त हमारे भारत में रहते हैं। जैसे- कई बुझे हुए दीपों को जलाने के लिए एक ही जला हुआ दीपक पूर्ण समर्थ है उसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व के मनुष्यों के अन्दर ज्ञान का दीपक जलाने के लिए भी संत पर्याप्त है। जैसे समदर्शी वायु-सूर्य सम्पूर्ण सृष्टि में वायु व प्रकाश को पहुँचाने में समर्थ हैं इसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व को अंधकार से प्रकाश में लाने के लिए तथा विश्व के अशान्त मानव को शान्ति पहुँचाने के लिए संत शक्ति पर्याप्त है। सन्तों के सामर्थ्य ने विश्व को विवेक का आनन्द दिया है और शिवाजी, महाराणा जैसे अनेक राष्ट्र भक्त दिए हैं- इतिहास इसका साक्षी है।

□□□

**जिस घर में नित्य सुन्दरकाण्ड  
का पाठ श्रद्धा और शुद्ध उच्चारण  
के साथ किया जाता है। वहाँ सदैव  
सुख शान्ति रहती है।**

**-पूज्यपाद जगद्गुरु जी**

## गुरु मेरे उर बसैं

□ कपूरचन्द्र 'केतन' (लखनऊ)

शान्ति मंगल करन उर हीरक वरन हो। हमारे सामने बैठे मुनीश्वर रूप में भगवन।  
 चार अनुयोगी दमकती रवि किरन हो। इन्हीं की चरण रज से मुक्ति पा जाते सभी प्राणी।  
 दीजिये दस धर्म लक्षण आत्म दर्शन। रूप सुन्दर असुन्दर जब देह हो।  
 गुरु मेरे उर बसैं पावन चरन हों। आदमी की सोच में संदेह हो।  
 गुरु जब रुष्ट होते हैं तो कल्याण होता है। गुरुवचन दर्शन करें शंकारहित,  
 गुरु जब प्रसन्न होते हैं तो निर्वाण मिलता है। जब हृदय में संत के प्रति स्नेह हो।  
 गुरु में वह अपार शक्ति है साथी शान्ति का सागर उमड़ता गुरुवचन में  
 धन-यश-बल-बुद्धि भगवान मिलता है। ज्ञान की गंगा प्रवाहित देह मन में।  
 उदय जब पुण्य का होता है तो मिल जाते हैं गुणी ज्ञानी। बुझे दीपक को मिली नवज्योति 'केतन'  
 बड़ी मुश्किल से सुनने को मिला करती गुरुवाणी। साधना की उच्च स्थिति आचरण में।

□□□

## राघव प्रभु प्रगट भये

□ आचार्य दिवाकर शर्मा

आज सब मिल मंगल गाओ  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 नौमी तिथि मधुमास पुनीता  
 शुक्लपक्ष अभिजित हरिप्रीता।  
 आज मोतियन चौक पुराओ।  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 शीतल मन्द सुरभि बह बाऊ।  
 हरषित सुर सन्तन मन चाऊ।  
 आज बन्दनवार सजाओ  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 सुमन वृष्टि आकाश ते होई।  
 ब्रह्मानन्द मगन सब कोई।  
 आज प्रभु चरणन चित लाओ

राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 अनुपम बालक देखिय जाई।  
 रूप राशि गुन कहि न सिराई।  
 आज सकल सुकृत फल पाओ।  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 करि आरती निछावर करहीं  
 बार बार शिशु चरणन परहीं  
 इन्हें मन मन्दिर में बसाओ  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।  
 जो आनन्द सिन्धु सुखरासी।  
 सीकर ते त्रैलोक सुपासी  
 इन पर सर्वस्व लुटाओ  
 राघव प्रभु प्रगट भये हैं।

□□□

## श्रीराघव अवध प्रगटे आज

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

राघव अवध प्रगटे आज।  
भगत हित बने नृपति बालक  
मुदित सकल समाज।।  
कोटि कोटि मनोज मदहर  
नील नीरद श्याम।  
मनहुँ सुषमा संग विराजत  
सुभग सुख आराम।।  
मुदित मन तिहुँ लोक बिकसत  
साधु अति अनुकूल।  
हरषि जय जय करत प्रमुदित  
बिबुध बरसत फूल।।  
सिद्ध मुनि गन्धर्व गावत

अपसरा नभ नाचि।  
करि निछावर सकल मन  
साँवरी छवि पर राचि।।  
शिव विरंचि सिहात देखत  
कौसिला कौ भाग।  
भाव सरसिज देखि पुलकित  
सुभग मेघ तडाग।  
हरषि दर्शन करत पुरजन  
लेत लाघ अघाइ।  
जनम को फल पाव 'गिरिधर'  
राम शिशु गुन गाइ।।

( राघव गीत गुंजन से )

□□□

## विश्व शान्ति के प्रहरी

□ डा० रामदेव प्रसाद सिंह 'देव'

शुचि कर्म निष्ठ हम भारतीय  
ग्रामीण सरल नहीं, शहरी हैं  
पर सर्व शुभैषी हित चिन्तक  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।  
वसुधा कुटुम्ब की भाव ध्वजा  
सर्वत्र आज भी फहरी है  
समभाव बोध से परिपूरित  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।  
आदर्श पूर्ण मानवता की  
मर्यादा यहीं से उभरी है  
साक्षी सारा इतिहास अहो  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।

मानव मूल्यों की मर्यादा  
सच में हम पर ही ठहरी है  
गीता मानस से आलोकित  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।  
ऋषि परम्परा में विश्व वंद्य  
समभाव पैठ अति गहरी है  
खलु ब्रह्म भाव के दृष्टा ज्यों  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।  
हम सबकी सबके प्रति श्रद्धा  
अपनापन वृत्ति सुनहरी है  
सब सीय राममय सृष्टि अहो  
हम विश्व शान्ति के प्रहरी हैं।

□□□

## निरंजन के दृग अंजन देख्यो

□ पूज्यपाद जगद्गुरु जी

नील सरोरुह श्यामल अंगनि  
कोटि अनंगन की छवि पेख्यो।  
आँचर माहिं कौसल्या के राजत  
लाजत काम कलानिधि लेख्यो॥  
गोल कपोल लटैं लटकैं

अटकैं बिधु पै अलिवृन्द परेख्यो।  
'गिरिधर' भाव विभोर भयो  
ज्यों निरंजन के दृग अंजन देख्यो॥  
( श्रीसीताराम केलि कौमुदी से। )  
□□□

## प्रस्तर शिला राम ने तारी

□ श्रीमती श्रीदेवी चौहान ( संस्कृत प्रवक्ता )

प्रस्तर शिला राम ने तारी, गुरुवर कृपा प्रसाद दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण विहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए।  
जीवन-दीप स्नेह से खाली, कैसे इसकी ज्योति जलाऊँ।  
छाया मन में घोर अँधेरा, कैसे तम को दूर भगाऊँ।  
स्नेह मिले हो ज्योति उजागर, ऐसा मुझे प्रयत्न दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
आत्मोद्धार जगत का करने, देव पुरुष बनकर आये हैं।  
अपनी कृपा दृष्टि से अगणित जन-मन दुःख मिटाये हैं॥  
अशरण-शरण जगद्गुरु यतिवर, मुझ पर कुछ उपकार कीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
दिव्य दृष्टि के प्रखर तेज से, आगम-निगम सिद्धकर डाले।  
त्याग-तपस्या के प्रकाश से, जीवन में भर गये उजाले॥  
जीवन-दशक सफल हो जाये, ऐसा कुछ अनुदान दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
भाव नहीं है, भक्ति नहीं है, कृपा पा सकूँ शक्ति नहीं है।  
दिव्य तेज वर्णन करने की वाणी में अभिव्यक्ति नहीं है॥

बाल चपलता मात्र मानकर, थोड़े में बहु ग्रहण कीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
अर्जित तप-प्रताप से गुरुवर, मुझको कुछ भी नहीं चाहिए।  
दैवी जो सम्पत्ति आपकी, केवल उसकी भक्ति चाहिए॥  
गुरुवर परम प्रकाशक, मुझको निर्मल किरण प्रकाश दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
'रामेश्वरम्' परम पावन है, रामसेतु से पूज्य उदधि है।  
शिव की दिव्य शक्ति से अर्चित, दुःखवभय मोचन भव वारिधि है।  
यहाँ सभी भव शोक नशाऊँ, ऐसा प्रभु वरदान दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥  
यह मेरी है मात्र प्रार्थना, पाने का अधिकार नहीं है।  
भगवदीय ईप्सा, मम इच्छा, एक बने उपकार यही है॥  
जिसमें निज सुध बुध खो जाऊँ, राघवीय वह भक्ति दीजिए।  
आई हूँ मैं शरण तिहारी, मेरा भी उद्धार कीजिए॥

□□□



**फोन- 05198-224413, 07670-265478**

**ॐ नमो राघवाय ॥ नमो राघवाय ॥ नमो राघवाय ॥ नमो राघवाय ॥ नमो राघवाय ॥**

## गायत्री-मन्त्र की महत्ता का रहस्य

□ पूज्यपाद पं० दीनानाथ शास्त्री सारस्वत

‘गायत्री छन्दसामहम्’ (भगवद्गीता १०/३५)  
‘उपनयन-रहस्य’ हम बता चुके; उपनयन में गायत्री-मन्त्र का उपदेश किया जाता है। यह क्यों? इसका इतना महत्त्व क्यों? इस पर अब विचार किया जाता है।

‘ॐ भूभुवः स्वः, तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।’ यह मन्त्र धार्मिक जगत् में प्रसिद्ध है। यह ‘अथर्ववेदसं०’ से अतिरिक्त तीन वेदों की संहिताओं में मिलता है। ‘अथर्ववेद’ की शौनकसंहिता से भिन्न किसी संहिता में उक्त मन्त्र कदाचित् मिल जाय; यह सम्भावना हो सकती है। तथापि अथर्ववेद-शौनकसंहिता (१९/७१/१) में वेदमाता गायत्री की महिमा तो वर्णित है ही। ‘ऋग्वेद’ की शाकलसंहिता में (३/६२/१०) उक्त मन्त्र मिलता है, ‘सामवेद’ की ‘कौथुमसंहिता’ में भी उत्तरार्चिक (१३/४/३/१) में मिलता है। शुक्ल-यजुर्वेद की वाजसनेय-संहिता (३/३५, १६/३, २२/९, ३०/२) में, तथा काण्वसंहिता (३/४३, २४/१३, ३४/२) एवं ‘कृष्णयजुर्वेद’ की ‘तैत्तिरीयसंहिता’ (१/५/६/१२, १/५/८/१०, ४/१/११/७) में तथा कृष्णयजुर्वेद की ‘मैत्रायणी-संहिता’ (४/१०/७७) में भी मिलता है। इस प्रकार अन्य वेदसंहिता में भी इसका मिलना सम्भव है।

यह गायत्री-मन्त्र, सावित्री, गुरुमन्त्र आदि नामों से प्रसिद्ध है। गायत्री-छन्दवाला होने से यह ‘गायत्री’ नाम से प्रसिद्ध है। यद्यपि ११ स० ध०

गायत्री-छन्द वाले मन्त्र अन्य भी बहुत से हैं; तथापि ‘प्रधानेन हि व्यपदेशा भवन्ति’ इस न्याय से प्रधान इसी मन्त्र का उक्त नाम प्रसिद्ध है। अथवा ‘गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मणः’ (निरुक्त ७/१२/६) ‘गायतो (ब्रह्मणो) मुखादुदपतत्-इति ब्राह्मणाम्’ (नि० ७/१२/५), तथा ‘गायन्तं त्रायते’ इत्यादि निर्वचन से योगिक-रूप से भी उक्त नाम से प्रसिद्ध है। ‘सा हैषा गयान् (प्राणान्) तत्रे, तस्य प्राणान् त्रायते (शत० १४/८/१५/७) इस प्रकार गायत्री प्राण-रक्षणी विद्या भी है। ‘सवितुरियम् ऋक्’ इस विग्रह से यह मन्त्र ‘सावित्री’ नाम से भी प्रसिद्ध है। इसी कारण ही इसकी स्त्रीलिङ्ग से प्रसिद्धि है। अथवा गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती इन तीन छन्दों के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के सावित्र मन्त्र हैं, तब इन छन्दों के स्त्रीलिङ्गान्त होने से गायत्री-सावित्री, त्रिष्टुप्-सावित्री, जगती सावित्री इस प्रकार भी ‘सावित्री’ मे स्त्रीत्व है। इस प्रकार ‘वेदमाता’ (अथर्व० १९/७१/१) इस नाम से प्रसिद्ध होने से भी इसमें स्त्रीलिङ्ग-रूप से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त सविता वाले मन्त्र में सविता की शक्ति भी सन्निहित है, क्योंकि-शक्ति तथा शक्तिमान का अभेद हुआ करता है; कभी इस शक्तिमान् को शक्ति रूप से भी वर्णित किया जाता है। शक्ति स्त्रीलिङ्ग होने से उस ‘देवी’ रूप में वर्णित किया जाता है। सविता की शक्ति ही गायत्री देवी के नाम से विख्यात है। इसी कारण सनातन धर्म की सन्ध्या में उक्त मन्त्र के विसर्जन के अवसर पर

‘उत्तमे शिखरे देवि!’ (तैत्तिरीयारण्यक १०/३०) इस प्रकार स्त्रीत्व का प्रयोग है। सविता को शक्तिरूप होने से उसका ‘श्वेतवर्णा समुद्दिष्टा’ इस प्रकार देवी रूप से वर्णन आया है। इसी गायत्री का उपस्थान ‘गायत्र्यस्येकपदी.....असावदो मा प्रापत्’ (१४/८/१५/१०) शतपथ-प्रोक्त इस मन्त्र में आया है, जो सन्ध्या में पढ़ा जाता है। उपनयन हो जाने पर वेदारम्भ में आचार्य-पदवी को धारण करने वाला गुरु इसी मन्त्र का उपदेश करता है। इस कारण यह ‘गुरु-मन्त्र’ नाम से प्रसिद्ध भी है। यद्यपि वेदारम्भ-संस्कार में वेद का ही आरम्भ अपेक्षित है; तथापि उस समय विद्यार्थी वेदाङ्ग पढ़े हुए न होने से वेद में चल नहीं सकता; तब वेद का सारभूत यही मन्त्र गुरुद्वारा उपदिष्ट किया जाता है। ‘उक्त मन्त्र वेद का साररूप है’- यह आगे बताया जायगा।

इस मन्त्र में ‘सविता’ देवता से प्रार्थना है। ‘सविता’ सूर्य को कहते हैं। इससे ‘अभिमानिव्यपदेशात्’ (२/१/५) इस ‘वेदान्त-दर्शन’ के सूत्र के आधार से सूर्यमण्डलान्तर्गत सूर्याभिमानि देवविशेष लिया जाता है, जो चेतन है। जैसे जड़ जलों का चेतन देव वरुण, वेद में ‘यासां (अपां) राजा वरुणो यति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम्’ (ऋ० ७/४९/३) (यहाँ पर ‘आपो देवताः’ है, अप्-शब्द नित्यस्त्रीलिङ्ग है) इस मन्त्र से संकेतित किया गया है; वैसे ही जड़ सूर्यमण्डल का भी चेतन-देव ‘योऽसावादित्ये पुरुषः सोसावहम्’ (४०/१७) इस यजुर्वेद (वा० सं०) के मन्त्र में संकेतित किया गया है।

सूर्यादि का अभिमानी देवता भी उसी-उसी नाम से प्रसिद्ध होता है। जो कि वेद हमें सूर्य आदि की

उपासना सिखलाता है, उसे वहाँ उनकी चेतनता इष्ट है। चाहे सूर्य आदि पदार्थ लौकिक-व्यवहार में जड़ प्रसिद्ध हों; पर वास्तव में ये चेतन हैं; क्योंकि- इनके अन्दर इनका अभिमानी (अधिष्ठाता) देवता विराजमान है। इसी कारण ‘अभिमानिव्यपदेशस्तु’ (२/१/५) इस ‘ब्रह्मसूत्र’ के शाङ्करभाष्य में कहा है- ‘मृदाद्यभिमानिन्यो वागाद्यभिमानिन्यश्च चेतना देवता वदनसंवदनादिषु चेतनोचितेषु व्यवहारेषु व्यपदिश्यन्ते, न भूतेन्द्रियमात्रम्।....अनुगताश्च सर्वत्र अभिमानिन्यः चेतना देवता मन्त्रार्थवादेतिहास-पुराणादिभयो-ऽवगम्यन्ते-” इति। यहाँ पर आचार्य ने भूत तथा इन्द्रियों के अधिष्ठाता के चेतन में होने में वेद के मन्त्रभाग तथा ब्राह्मणभाग की भी साक्षी बताई है। तभी वेद में- ‘वरुणोऽपामधिपतिः’ (अथर्व० ५/२४/४) ‘इन्द्रो वै यज्ञस्य देवता’ (शतपथ० ३/५/२/९) जल, यज्ञ आदि के अधिष्ठाता देवता वरुण, इन्द्र आदि माने गये हैं।

इसी को स्वा० श्रीशंकराचार्य ने ‘वेदान्त-दर्शन’ के १/३/३३ सूत्र के भाष्य में भी स्पष्ट किया है। जैसे कि- ‘ज्योतिरादिविषया अपि आदित्यादयो देवतावचनाः शब्दाः, चेतनावन्तम् ऐश्वर्याद्युपेतं तं तं देवतात्मानं समर्पयन्ति, मन्त्रार्थवादादिषु तथा व्यवहारात्। अस्ति हि ऐश्वर्ययोगाद् देवतानां ज्योतिराद्यात्मभिश्च अवस्थातुम्, यथेष्टं च तं तं विग्रहं ग्रहीतुं सामर्थ्यम्। तथाहि श्रूयते- ‘मेधातिथि ह काण्वा-यनमिन्द्रो मेषो भूत्वा जहार’ (षड्विंशब्रह्मण १/१) स्मर्यते च- ‘आदित्यः पुरुषो भूत्वा कुन्तीमुपजगाम ह’ इति। मृदादिष्वपि चेतना अधिष्ठातारोऽभ्युपगम्यन्ते- ‘मृदब्रवीद्, आपोऽब्रुवन्-इत्यादि-दर्शनात्। ज्योतिरादेस्तु

भूतधातोरादित्यादिषु अचेतनत्वमभ्युप-गम्यते।  
चेतनास्तु अधिष्ठातारो देवतात्मानो  
मन्त्रार्थवादादिव्यवहाराद्-इत्युक्तम्'। (देवताधि-  
करणेऽष्टमे)।

इस सिद्धान्त का विशदीकरण आर्यसमाजी विद्वान् श्रीराजारामजी शास्त्री ने अपनी 'अथर्ववेदभाष्य' की भूमिका में इस प्रकार किया है- 'परमेश्वर की सृष्टि में देहधारी जीवों की सृष्टि नाना-प्रकार की है। इस भूलोक में ही शैवाल, तृण, घास आदि नाना-प्रकार के स्थावर और पशु-पक्षी आदि नाना प्रकार के जङ्गम हैं, ये सारे जीव-विशेष हैं। मनुष्य इन सबसे ऊँची श्रेणी का जीव है, पर परमात्मा की सृष्टि यहीं तक समाप्त नहीं है। मनुष्य से कई दर्जों में ऊँचा पद चेतना है। वे अपनी शक्ति और ज्ञान उनके सामने तुच्छ हैं। इस अनेक प्रकार की ऊँची सृष्टि में सबसे ऊँचा स्थान देवताओं का है। देवता चेतन हैं। मनुष्यों से ऊपर और परमेश्वर से नीचे हैं। परमेश्वर की ओर से उनको भिन्न-भिन्न अधिकार मिल हुए हैं जिनका कि वे पालन करते हैं। देवता अजर और अमर हैं, पर उनका अजर-अमर होना मनुष्यों की अपेक्षा से है, वस्तुतः उनकी भी अपनी-अपनी आयु नियत है। ब्रह्माण्ड की दिव्य शक्तियों में से एक-एक शक्ति पर एक-एक देवता का अधिकार है। जिस शक्ति पर जिसका अधिकार है, वही उसका देह है जो उसके वश में है।

जैसे हमारे देह में एक जीवात्मा है, जो इस देह का अधिपति है, इसी प्रकार उस शक्ति के अन्दर भी एक जीवात्मा है, जो उसका अधिपति है। जैसे हमारे अधीन यह देह है, वैसे ही एक देवता के अधीन सूर्यरूपी देह है। हम एक थोड़ी सी शक्ति वाले देह के

स्वामी हैं, वह एक बड़ी शक्ति वाले देह का स्वामी है, वह अध्यात्म शक्तियों में इतना बढ़ा हुआ है कि- अपनी इच्छा के अनुसार जैसा चाहे, वैसा रूप धारकर, जहाँ चाहे वहाँ जा सकता है। वही देव सूर्य का अधिष्ठाता कहलाता है और सूर्य के नाम से ही बुलाया जाता है। इसी प्रकार अग्नि और वायु आदि के अधिष्ठाता देवता हैं। देवताओं का ऐश्वर्य बहुत बड़ा है; पर वह सारा परमेश्वर के अधीन है। एक-एक देवता एक-एक दिव्यशक्ति का नियन्ता है। पर उन सबके ऊपर उन सबका नियन्ता परमेश्वर है। इसलिए भी सभी देवता मिलकर जगत् का प्रबन्ध इस प्रकार कर रहे हैं- जिस प्रकार राजा के अधीन उसके भृत्य उसके राज्य का प्रबन्ध करते हैं।

देवताओं की उपासनाओं से उन कामनाओं की सिद्धि होती है, जिसके कि वे मालिक होते हैं।.... वे तब तक दिव्य-शरीर को धारण किये रहते हैं, जब तक उनका वह अधिकार समाप्त नहीं हो लेता, जिस अधिकार पर उनको परमेश्वर ने लगाया है। अधिकार की समाप्ति पर वे मुक्त हो जाते हैं और उनकी जगह दूसरे आ ग्रहण करते हैं; जो मनुष्यों में से ही उपासना द्वारा उस पद के योग्य बन गये हैं। देवताओं के ऐश्वर्य के दर्जे हैं, सबसे ऊँचा दर्जा ब्रह्मा का है, (अथर्ववेद भाष्य-भूमिका पृ० ११)

इससे स्पष्ट है कि सूर्य आदि देवता चेतना हैं। बल्कि शास्त्रों में तो यहाँ तक कहा है कि सभी वस्तुएँ चेतन हैं। इसी अभिप्राय से महाभाष्यकार श्रीपतञ्जलि ने भी ३/१/७ सूत्र में 'सर्वस्य वा चेतनावत्त्वात्' इस वार्तिक के विवरण में कहा है- 'अथवा सर्वं चेतनावत्। एवं हि आह- 'कंसकाः सर्पन्ति, शिरीषोऽयं स्वपिति,

सुर्वचला आदित्यमनु पर्येति। 'आस्कन्द कपिलक' इत्युक्ते तृणामास्कन्दति। अयस्कान्तमयः संक्रामति। ऋषिः (वेदः) पठति 'शृणोत ग्रावाणः' यहाँ पर 'शृणोत ग्रावाणः' यह वेदमन्त्र देकर सिद्ध किया जाता है कि सभी जड़ दीख रही वस्तुएँ भी चेतन हैं।

उक्त वेदमन्त्र यह है- शृणोत्वग्निः समिधा हवं मे, शृण्वन्तु आपोधिषणाश्च देवीः। शृणोत ग्रावाणो विदुषोऽनु यज्ञ शृणोतु देवः सविता हवं मे' (कृष्णयजुर्वेद-तैत्तिरीय सं० १/३/१३/१) जब यहाँ जड़ पत्थर को भी वेद ने सुनने के लिए कहा है; तब पत्थर आदि बाह्य व्यवहार में अचेतन कहे जाते हुए भी, वेद की दृष्टि में चेतन हैं, यह वैदिक सिद्धान्त है। यह महाभाष्यकार आशय है। इसी को 'प्रदीप' में कैयट ने स्पष्ट किया है- 'सर्वस्य वेति' आत्माऽद्वैतदर्शनेनेति भावः। ऋषिरिति-वेदः सर्वभावानां चैतन्यं प्रतिपादयतीत्यर्थः। वैचित्र्येण च पदार्थानामुपलम्भात् सर्वचेतनधर्मः सर्वत्र नोद्भावनीयः'। इसमें इस प्रश्न का कि यदि पत्थर आदि चेतन हैं तो वे भी हम चेतनों की तरह चलते-बोलते क्यों नहीं- इसका उत्तर दे दिया गया है कि पदार्थों में परस्पर विचित्रता भी हुआ ही करती है, तब सभी चेतनों के धर्म उसी रूप में सभी चेतनों में नहीं मिल सकते, क्योंकि किसी में चेतनता अभिव्यक्त होती है; किसी में अनभिव्यक्त। श्रीनागेशभट्ट ने भी अपने 'उद्योत' में इसी का इस प्रकार समर्थन किया है- 'वैचित्र्येणेति' चेतनेषु मनुष्येष्वपि नानाजातीय-व्यवहारदर्शनाद् इति भावः। सर्वत्र परिणामदर्शनेन चेतनाधिष्ठानं विना च तदऽसम्भवात् सर्वस्य तदधिष्ठितत्वं ज्ञायते इति

तात्पर्यम्'। अर्थात् जब चेतन मनुष्यों में भी नाना प्रकार के व्यवहार दिखलाई पड़ते हैं, तब चेतन पत्थर आदियों में भी सभी चेतनों वाले व्यवहार नहीं हो जाते। चेतन मनुष्यों में भी लकवा आदि के कारण चलना-बोलना आदि चेष्टा नहीं रहती। जब सर्वत्र परिणाम-परिवर्तन आदि विकार दीखता है, तब वह चेतन के अधिष्ठान के बिना नहीं हो सकता। जब ऐसा है तब सभी पदार्थ चेतन हैं- यह स्पष्ट है।

वार्तमानिक विज्ञान भी इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है। वैज्ञानिकों ने रेडियम धातु की विद्युत्कणिका-का परीक्षण करके यह ज्ञान प्राप्त किया है कि 'रेडियम' धातु के एक परमाणु से हजारों विद्युत-कणिका प्रतिक्षण में प्रकट होती हैं। परिमाण में वे कण इतने छोटे होते हैं कि एक हजार भी मिले हुए उनका संयुक्त-परिमाण वा गुरुत्व 'हाईड्रोजन' के एक परमाणु के तुल्य भी नहीं होता। इनके निकलने का वेग प्रकाश के वेग का लगभग दो-तिहाई होता है। प्रकाश का वेग एक सेकंड में १,८६,००० मील के लगभग सिद्ध किया गया है। सूर्य से लगभग साढ़े नौ करोड़ मील की दूरी पर स्थित पृथ्वी पर उसका प्रकाश आठ मिनट में पहुँचता है।

इन अपूर्व बातों को देखकर वैज्ञानिकों की यह धारणा हो गई है कि समस्त चराचर जगत् में सारभूत वस्तु कोई भी नहीं है और संसार में कोई भी पदार्थ जड़ नहीं है। जड़ कहे जाने वाले पदार्थों के छोटे से छोटे कण अर्थात् परमाणु को देखने से तथा उसे तोड़कर उसके सहस्रों भाग करने पर विद्युत्कणियों के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं मिलता। फिर भी उनकी सत्ता दिखाई पड़ती है और नियम से प्रतिक्षण

उनकी चलन-प्रवृत्ति मिलती है; इससे वर्तमान वैज्ञानिकों के विचार में जड़ वस्तुओं में भी दैवी शक्ति का आभास दीखने से जड़ों में भी चेतन-सत्ता सिद्ध हुई।

वस्तुतः यह सिद्धान्त है भी ठीक ही। शास्त्र का भी यही सिद्धान्त है। शास्त्र परमात्मा को अणु-अणु में व्याप्त मानता है। अद्वैत-सिद्धान्त में तो अणु-अणु भी परमात्मा का ही रूप है, वा परमात्मा ही है। उस (परमात्मा) से भिन्न किसी भी वस्तु की पारमार्थिक सत्ता नहीं है। ईश्वर 'सच्चिदानन्द' इस शब्द से चेतन ही है; तो समस्त सांसारिक वस्तुएँ जड़ दीख रही हुई भी वस्तुतः चेतन ही हैं। जो कि उनमें स्थूलता से चेतन्य की अभिव्यक्ति नहीं दीखती; उसमें कारण है उनमें स्थूलता से इन्द्रियों तथा मन की अनभिव्यक्ति। आत्मा को ही देख लीजिये, वह चेतन है। जब उसमें मरण के समय इन्द्रियाँ और मन अभिव्यक्त नहीं होते; तब वह आत्मा भी चेष्टाशाली नहीं मालूम होता। प्रत्युत आत्मा के शरीर में विद्यमान होने पर भी, उसमें होती हुई भी इन्द्रियाँ कारणवश कार्य करने वाली नहीं होतीं, वा निर्बल हो जाती है; तब आत्म युक्त शरीर वाले होने पर भी पुरुष की चेष्टा नहीं दीखती। इस विषय में मूर्च्छित (बेहोश) पुरुषों का उदाहरण देख लीजिये। अथवा न मूर्च्छित भी निर्बल-इन्द्रिय शक्ति वाले, वा लकवा बीमारी से घिरे पुरुषों का उदाहरण देख लीजिये। परमात्मा चेतना माना जाता है, पर उसमें 'हरकत' क्यों नहीं दीखती? उसमें भी कारण है उसका स्थूल इन्द्रिय-मन आदि से असंयोग। इसीलिए उसके शब्द आदि व्यवहार भी स्थूल नहीं हुआ करते।

इससे सिद्ध हुआ कि-जड़ वस्तु भी वास्तव में चेतन हुआ करती है। भैंस की पुरीष के जड़ परमाणुओं में जब स्थूलता से विशिष्ट शक्ति का संयोग व्यक्त होता है; तब उसके पुरीष में कीड़े हो जाते हैं। यदि जड़ों में चेतन-शक्ति सर्वथा न होती; तो अभाव से भाव की उत्पत्ति कैसे हो गई? जो चैतन्य शक्ति कीड़ों में है, वह भैंस की पुरीष के जड़ कहे जाने वाले परमाणुओं में भी थी। परन्तु इन्द्रियादि की अभिव्यक्ति न होने से वह चैतन्य-शक्ति अपना उपयोग न कर सकी। बल्ब न होने पर बिजली नहीं जला करती। इसी सिद्धान्त को मानकर स्वर्गीय जगदीशचन्द्रवसु ने वृक्षों में चेतनता मानी थी; इसी प्रकार पत्थरों में भी मानी। इसी अभिप्राय से वर्तमान वैज्ञानिक लोग सूर्य में भी प्रसन्नता-अप्रसन्नता के परमाणु मानने लगे हैं। बुद्धि के अधिष्ठाता देव सूर्य हैं।

इसका विवरण इस प्रकार है। कैम्ब्रिज-युनिवर्सिटी लन्दन में सूर्य के विषय में एक लैक्चर हुआ था; जो समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुका है। उसको तो हम फिर अन्य लेखों में पाठकों को उपहृत करेंगे। उसमें प्रकृत अंश यह है। उस व्याख्याता ने कहा- 'उत्तरी अमेरिका के ग्रेनलैण्ड प्रदेश में एक दफीने का खोदना शुरू हुआ। खोदने पर दफीना (माणिक्य) तो मिला नहीं, किन्तु एक देवमन्दिर मिला। उसमें सूर्य की एक मूर्ति है, जो चमकदार पत्थरों से बनाई हुई है। सूर्य के सामने ही अग्नि में धुवाँ उठ रहा है, जिससे मालूम होता है कि- अग्नि में कुछ सुगन्धित द्रव्य डाला गया है। इधर-उधर फूल पड़े हैं। यह सब दृश्य पत्थरों से बनाया गया है।



इस विचित्र सूर्य-मन्दिर मिलने से मालूम हुआ कि- किसी युग में हिन्दुओं का चक्रवर्ती राज्य अमेरिका तक फैला था। इसके अतिरिक्त यह भी मालूम हुआ कि- हिन्दुओं का विश्वास था कि- सूर्य प्रसन्न तथा क्रुद्ध भी हो सकता है। यदि ऐसा विचार न होता; तो एक हिन्दु उस (सूर्य) की पूजा क्यों करता? क्यों उसे नमस्कार करता? इस विषय को लेकर वैज्ञानिक संसार में क्रान्ति उत्पन्न हो गई। मिस्टर जार्ज नामक किसी विज्ञान के प्रोफेसर ने यह परीक्षा की कि सूर्य में कृपाशक्ति है या नहीं? हम सूर्य में समस्त तत्त्वों की सत्ता तो मानते रहे; पर यह कल्पना भी नहीं कर सके कि सूर्य में प्रसन्नता-अप्रसन्नता का तत्त्व भी विद्यमान है। हिन्दुओं की सूर्य-पूजा का वृत्त भारतीय प्राचीन इतिहास से हमें पहले ही पता था। अमेरिका में मिले सूर्य-मन्दिर से हमें हिन्दुओं की सूर्य-पूजा में अन्य भी निश्चय हो गया। मि० जार्ज ने सोचा कि- हिन्दुओं की सूर्योपासना क्या मूर्खतापूर्ण थी वा वास्तविकतापूर्ण?

इसकी रोचक परीक्षा हुई। मई का महीना था। पूरे दोपहर के समय केवल पाजामा पहने मि० जार्ज नंगे शरीर धूप में ठहरे। पाँच मिनट सूर्य के सामने ठहरकर वे कमरे में गये। थर्मामीटर से उन्होंने अपना तापमान देखा। तीन डिग्री तक बुखार चढ़ा था। दूसरे दिन उक्त महाशय ने फूल-फलों का उपहार तैयार किया। अग्नि में धूप जलाया। तब वह पूरे दोपहर में नंगे शरीर धूप में गया। उसने सूर्य के सामने श्रद्धा से फूल चढ़ाये, फल भी। हाथ जोड़कर प्रणाम किया। जब वह अपने कमरे में गया; तो घड़ी में उसने देखा कि- आज वह ग्यारह मिनट तक सूर्य के सामने रहा। थर्मामीटर से मालूम हुआ कि-आज उसका तापमान नार्मल रहा। उसका पारा ठण्डक की ओर रहा।

इससे उसने यह परिणाम निकाला कि वैज्ञानिकों का “सूर्य केवल अग्नि का गोला और जड़ है” यह सिद्धान्त गलत है, वस्तुतः उसमें अप्रसन्नता और प्रसन्नता तत्त्व भी विद्यमान है।” □□□

## अहंकार पतन का कारण

धन और देहबल के अहंकार में डूबकर जो धर्म तथा मर्यादाओं का उल्लंघन कर मनमाना उच्छृंखल आचरण करते हैं, एक न एक दिन वे दुर्गति को अवश्य प्राप्त होते हैं।

धन का अहंकार मनुष्य को अंधा बनाकर उससे बड़ा-से-बड़ा घोर पाप-कर्म करा देता है। धन से अंध हुआ व्यक्ति कई बार तो छोटे-बड़े का अन्तर भूलकर, अपने कर्तव्य को भुलाकर अक्षम्य अपराध तक कर बैठता है। वह यह भूल जाता है कि धन की चकाचौंध ने उसकी आँखों पर पर्दा डाला हुआ है तथा वह जो घोर कुकृत्य, धर्मविरुद्ध आचरण करने में नहीं हिचकिचा रहा, यही उसके वंशनाश तथा घोर पतन का कारण बनने वाले हैं। अतः धन के मद में अन्धे कदापि नहीं बनें।

जीवन का अन्तिम लक्ष्य धन, सत्ता या ऐश्वर्य नहीं, भगवान की कृपा प्राप्ति होना चाहिए। सीमा से अधिक सम्पत्ति विपत्ति का कारण अवश्य बनती है। (‘सद्गृहस्थ सन्त भक्तरामशरणदास’ से साभार)

□□□



## पूज्यपाद जगद्गुरु जी द्वारा नवनिर्मित शिव मन्दिर में प्राण प्रतिष्ठा समारोह तथा 'प्रेम इण्डस्ट्रीज़' में नई यूनिट का उद्घाटन

□ श्रीमती कुसुम गोयल

आशुतोष भगवान शंकर की असीम अनुकम्पा एवं श्रीमज्जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी रामभद्राचार्य जी महाराज की अहैतुकी कृपा से बुलन्दशहर रोड औद्योगिक क्षेत्र गाजियाबाद में दिनांक १५ फरवरी २००९ रविवार सायं ५ बजे नवनिर्मित शिवमन्दिर, (जिसका परमपूज्य गुरुदेव ने 'धनेश्वर मन्दिर' नामकरण किया) में पूर्ण शास्त्रीय विधि से पूजा अर्चन के साथ प्राण प्रतिष्ठा समारोह सम्पन्न कराया।

इससे पूर्व परमश्रद्धेय गुरु जी ने 'रामेश्वरम्' में आयोजित श्रीमद्भागवत कथा में हमें आज्ञा दी थी कि तुम हरिद्वार जाकर पवित्र नर्मदेश्वर शिवलिंग (१२ अंगुल प्रमाण) लेकर आओ और आचार्य चन्द्रदत्त सुवेदी आदि चार आचार्यों द्वारा प्राण प्रतिष्ठा से पूर्व की सारी वैदिक क्रिया सम्पन्न कराओ। मेरे पतिदेव श्रीराजेन्द्र गोयल ३० जनवरी २००९ को प्रातः हरिद्वार गये और गुरुदेव की आज्ञानुसार पवित्र नर्मदेश्वर शिवलिंग लेकर आये। तदनन्तर हमारे आवास 'प्रेम निवास' में नर्मदेश्वर भगवान को गंगाजल से स्नान कराकर श्वेतवस्त्र में लपेटकर घण्टे मंजीरों आदि वाद्यों के साथ आचार्य चन्द्रदत्त सुवेदी आदि आचार्यों द्वारा वेद मन्त्रों का पाठ तथा कीर्तन करते हुए हमारे परिवार के सभी सदस्यों ने 'प्रेम इण्डस्ट्रीज़' को प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचकर पं० चन्द्रदत्त सुवेदी, पं० कृष्ण कुमार, पं० केशवदेव आदि आचार्यों ने पूजा की तैयारी की।

१३ फरवरी को प्रातः वेदमन्त्रों के साथ पूजा आरम्भ हुई। वेदमन्त्रों की ध्वनि से सारा वातावरण गुंजायमान हो उठा। ऐसा प्रतीत हो रहा था मनो हम फैक्ट्री में नहीं मन्दिर में असंख्य भगवद्भक्तों के साथ विराजमान हैं।

सर्वप्रथम परमपवित्र भगवान नर्मदेश्वर को गाय के घी में लपेटा गया। कुछ समय पश्चात् शिवलिंग (नर्मदेश्वर भगवान) का जलाभिषेक सम्पन्न हुआ। तदनन्तर गंगाजल, दूध, दही, रोली, चावल, चन्दन, धूपबत्ती, पुष्प तथा बिल्वपत्रों से विधि विधान से पूजा कराकर नर्मदेश्वर भगवान को पीले वस्त्र में ढककर रखा गया। अगले दिन १४ फरवरी को पवित्र शिवलिंग को चावलों में रखा गया और पूजन के उपरान्त पुष्पों में पूर्ववत् रखा गया और इसके पश्चात् फलावास कराया गया। इसके पश्चात् जो पूजा आरम्भ हुई उसकी तो मुझे कल्पना भी नहीं थी नर्मदेश्वर भगवान (पवित्र शिवलिंग) को शुद्ध पात्र में विराजमान कर १०८ कलशों के जल से अभिषेक कराया गया। पूजन की इस प्रक्रिया को देखकर परिवार का प्रत्येक सदस्य भक्तिभाव में डूबकर रोमांचित हो रहा था। श्रीसुवेदी जी के साथ सभी आचार्य उच्च स्वर से वेदमन्त्रों का उच्चारण कर रहे थे तब ऐसा प्रतीत होता था कि आकाश से देवगण वेदमन्त्रों का सस्वर पाठ कर रहे हों। सभी कलशों में पवित्र गोमूत्र, गोधृत,

गोदुग्ध, गोदधि और गोबर तथा गंगाजल, पवित्र स्थानों की मिट्टी, जड़ी बूटी और पवित्र सरिताओं का जल भरा था। १४ जनवरी को प्रातः हवन में परिवार के सभी सदस्य सम्मिलित हुए और 'स्वाहा' की दिव्य ध्वनि से फैक्ट्री का परिसर गुंजायमान हो उठा। दोपहर में ही पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञानुसार श्रीरामचरितमानस का अखण्ड पाठ "आशुतोष तुम अवढर दानी। आरति हरहु दीन जन जानी" सम्पुट के साथ प्रारम्भ हुआ जो १५ जनवरी को दोपहर तक पूर्ण हुआ। इसके पश्चात् भगवन्नाम संकीर्तन हुआ। परमपूज्य गुरुदेव के पधारने का समय ज्यों ज्यों आ रहा था हम सबके हृदय की धड़कन बढ़ रही थी और गुरुदेव के दर्शनों की व्याकुलता भी अधीर कर रही थी। सायं ठीक ५ बजे परमपूज्य गुरुदेव और पूज्या बुआ जी का शुभागमन हुआ। आचार्य सुवेदी जी तथा अन्य आचार्यों ने वेदमन्त्रों से प्रातः स्मरणीय गुरुदेव एवं परमपूज्या बुआ जी का स्वागत किया तथा तुलसीमण्डल के सभी सदस्यों ने 'जगद्गुरु रामानन्दाचार्य जी की जय, गुरुदेव भगवान की जय, पूज्या बुआ जी की जय' के नारों से वातावरण को आनन्दमय कर दिया। परिवार के सदस्य श्रीवेद प्रकाश गोयल (अग्रज) श्रीविजेन्द्र गोयल (अनुज) तथा बहुओं एवं बालकों ने पुष्पहार समर्पित कर गुरुदेव का स्वागत किया और गुरुदेव के मार्ग में फूलों की चादर बिछा दी। हमने गुरुदेव के श्रीचरणों को पवित्र जल से धोकर चरणामृत ग्रहण किया मुझे उस समय श्रीकृष्ण सुदामा का स्मरण हो आया मेरी आँखों में

श्रद्धा और सौभाग्य के आँसू भर गये मानों नेत्र आँसुओं से गुरुदेव के चरण प्रक्षालन को आतुर हो रहे थे। इसके पश्चात् सभी ने परम पूज्य गुरुदेव एवं पूज्या बुआ जी को पुष्पहार समर्पित कर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। गुरुदेव एवं बुआ जी नवनिर्मित शिव मन्दिर में विराजमान हुए। गुरुदेव ने वेदमन्त्रों के साथ भगवान नर्मदेश्वर का ग्यारह बार अभिषेक किया। विधि विधान से प्राण प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई और नर्मदेश्वर भगवान को 'धनेश्वर' भगवान के नाम से अभिहित किया। भगवान का अभिषेक पूर्ण होने पर आरती की गई। इस सम्पूर्ण कार्यक्रम में नित्य रामायण सत्संग सभा के संयोजक श्री पं० चन्द्र प्रकाश कौशिक भी उपस्थित रहे। सभी आगन्तुकों ने भोजन प्रसाद ग्रहण किया और कार्यक्रम पूर्ण हुआ। गुरुदेव प्रेम निवास में पधारे और १६ जनवरी को प्रातः सब बच्चों को आशीर्वाद दिया। हमारे पौत्र विभव और प्रभव के साथ खेलते हुए गुरुदेव स्वयं बालक बन गये अहमदाबाद को प्रस्थान करने से पूर्व सबने गुरुदेव एवं बुआ जी के चरणों में नमो राघवाय निवेदन करके आशीर्वाद प्राप्त किया। हमारे परमपूज्य गुरुदेव हमारे हृदय में सदैव विराजमान रहें इसी भाव के साथ हमने गुरुदेव को सम्मानपूर्वक विदा किया। यह सत्य ही है कि-

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुः साक्षान्महेश्वरः।

गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

नमो राघवाय।

### व्रतोत्सवतिथिनिर्णयपत्रक

#### फाल्गुन शुक्ल पक्ष/सूर्य उत्तरायण, वसन्त ऋतु

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	व्रत पर्व आदि विवरण
एकादशी	शनिवार	पुनर्वसु	7 मार्च	आमलकी एकादशीव्रत (सबका)
द्वादशी	रविवार	पुष्य	8 मार्च	प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	सोमवार	श्लेषा	9 मार्च	—
चतुर्दशी	मंगलवार	मघा	10 मार्च	सत्यनारायणव्रत—होलिका दहन रात 9 बजे के बाद होलाष्टक पूर्ण/ श्रीचैतन्य महाप्रभु जयन्ती
पूर्णिमा	बुधवार	पू०फा०	11 मार्च	पूर्णिमा प्रातः 8/10 तक

#### चैत्र कृष्ण पक्ष /सूर्य उत्तरायण, वसन्त ऋतु

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	व्रत पर्व आदि विवरण
प्रतिपदा	बुधवार	—	11 मार्च	प्रतिपदा तिथि का क्षय
द्वितीया	गुरुवार	उ०फा०	12 मार्च	—
तृतीया	शुक्रवार	हस्त	13 मार्च	—
चतुर्थी	शनिवार	चित्रा	14 मार्च	श्रीगणेश चतुर्थी व्रत—संक्रान्ति सूर्य मीन में
पंचमी	रविवार	स्वाति	15 मार्च	—
षष्ठी	सोमवार	विशाखा	16 मार्च	—
षष्ठी	मंगलवार	अनुराधा	17 मार्च	षष्ठी तिथि का क्षय
सप्तमी	बुधवार	ज्येष्ठा	18 मार्च	शीतलाष्टमी बसौड़ा
अष्टमी	गुरुवार	मूल	19 मार्च	—
नवमी	शुक्रवार	पू०षा०	20 मार्च	—
दशमी	शनिवार	उ०षा०	21 मार्च	—
एकादशी	रविवार	श्रवण	22 मार्च	पापमोचनी एकादशी व्रत (सबका)
द्वादशी	सोमवार	धनिष्ठा	23 मार्च	पंचक दिन में 3/5 से प्रारम्भ
त्रयोदशी	मंगलवार	शतभिषा	24 मार्च	भौम प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	बुधवार	पू०भा०	25 मार्च	—
अमावस्या	गुरुवार	उ०भा०	26 मार्च	अमावस्या चन्द्र सम्वत्सर 2065 पूर्ण